इकाई – 5
प्राकृतिक संसाधन
(Natural Resources)

परिचय (Introduction)

मनुष्य अपनी विभिन्न आवश्यकताओं के लिए प्रकृति पर निर्भर है। भूमि, सूर्य का प्रकाश, मिट्टी, वायु, कोयला, वन तथा वन्य जीव अन्य सभी प्राकृतिक घटक है जो मानव जीवन में कहीं न कहीं उपयोगी होते हैं तथा जीवन को सुखमय एवं निरापद बनाते हैं।

संसाधन का अंग्रेजी शब्द Resource दो शब्दों क्रमशः Re + Source से मिलकर बना है। Re का अर्थ दीर्घ अवधि एवं Source का अर्थ है 'साधन'। इस प्रकार संसाधन का अर्थ वे स्त्रोत जिन पर दीर्घ अवधि तक मानव समाज निर्भर रहता है।

प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)

ऐसे संसाधन जो उपयोग करने के लिए परोक्ष रूप से प्रकृति से प्राप्त होते हैं। प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं।

प्रकृति के वे प्राकृतिक पदार्थ जो पृथ्वी पर सतत् जीवन एवं आर्थिक रूप से लाभकारी हो प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं। प्रमुख प्राकृतिक संसाधन निम्न प्रकार हैं–

1. वायु 2. जल 3. सूर्य का प्रकाश
4. मृदा 5. वन संसाधन 6. खनिज संसाधन
7. खाद्य संसाधन 8. ऊर्जा संसाधन

कुछ प्राकृतिक संसाधनों का विस्तृत विवरण यहाँ दिया जा रहा है–

वन संसाधन
(Forest Resources)

प्राकृतिक संसाधनों में वनों का प्रकृति के स्वरूप को निखारने में महत्वपूर्ण योगदान है। वनों से मानव को अनेक उत्पाद प्राप्त होते हैं तथा साथ–साथ अनेक जीवों को जीवन भी प्रदान करते हैं। वनों का महत्व निम्न प्रकार है–

(i) वनों से ईंधन एवं जलाऊ लकड़ी प्राप्त होती है।

(ii) वनों से इमारती लकड़ी प्राप्त होती है।

(iii) वनों से गोंद, रेजिन, फल आदि प्राप्त होते हैं।

(iv) वनों से हमें अनेक औषधियाँ प्राप्त होती हैं।

(v) वनों से वन्य जीवों को आवास एवं पशुओं का चारा उपलब्ध होता है।

(vi) उद्योगों के लिए कच्चा माल (फर्नीचर, कागज एवं दियासलाई) प्राप्त होता है।

(vii) वन भूस्खलन रोककर मृदा का संरक्षण करते हैं।

(viii) भूक्षरण को रोककर बाढ़ नियंत्रण में सहायक होते हैं।

(ix) वन वर्षा एवं जलवायु को नियंत्रित करते हैं।

उपरोक्त महत्व से यह निष्कर्ष निकलता है कि वन जहाँ एक ओर आर्थिक दृष्टि से अनेक महत्वपूर्ण उत्पाद प्रदान करते हैं वहीं दूसरी ओर पर्यावरण संतुलन द्वारा जीवों के लिए आवश्यक परिस्थितियों का निर्माण करते हैं।

वनों का वर्गीकरण (Classification of Forests)

वर्ष 2013 की वन रिपोर्ट के अनुसार (आंकड़े सेटेलाइट से उपलब्ध है) देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 21.23 प्रतिशत भाग ही वनों से आच्छादित है। इसके अनुसार देश के 69.79 मिलियन हैक्टेयर भूमि पर वन क्षेत्र है। हालांकि इनका वितरण अत्यन्त असमान है। उदाहरणार्थ अरूणाचल प्रदेश में 79%, असम में 42.4%, मध्यप्रदेश में 38% प्रतिशत, बिहार में 18% एवं उत्तर प्रदेश में 15% है जबकि राजस्थान में यह केवल 4% है। पूर्वी हिमालय एवं तराई क्षेत्रों में सदाबहार वन पाये जाते हैं जबकि राजस्थान, पश्चिमी पंजाब एवं उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में शुष्क वन पाये जाते हैं।

प्रशासनिक व्यवस्था व जलवायवीय विषमता के आधार पर वनों को तीन प्रकारों में बांटा गया है–

(i) संरक्षित वन (Protected forest) – सरकार के अधीन इन वनों के उपयोग का अधिकार कुछ शर्तों पर व्यक्तियों को दे दिया जाता है। वनों का 30 प्रतिशत भाग इसके अन्तर्गत आता है।

(ii) रक्षित वन (Reserved forest) – ये भी सरकार की सम्पत्ति होते हैं। इस प्रकार के वनों को प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए साधन के रूप में सुरक्षित बनाये रखते हैं। इसके अन्तर्गत 53% वन भाग आता है।

(iii) अवर्गीकृत वन (Unclassified forest) – इस प्रकार के वनों को सरकार निजी व्यक्तियों के ठेके पर देती है। वे वनों की उपज को बेचते हैं, पशु चराई के लिए प्रयोग करते हैं। सरकार को इससे आमदनी होती है। इसके अन्तर्गत 17% वन आते हैं।

भारत की जलवायवीय विषमता एवं प्राकृतिक कारणों से वन वितरण के आधार पर वन निम्न प्रकार के होते हैं–

(i) सदाबहार वन (Evergreen forest) – इस प्रकार के वनों में 200 से.मी. अधिक वार्षिक वर्षा होती है। ये वन सदैव हरे–भरे रहते हैं। ये वन पश्चिमी घाट, असम, अण्डमान निकोबार, उड़ीसा, त्रिपुरा, हिमाचल प्रदेश एवं पश्चिमी बंगाल में पाये जाते हैं। इनमें रबर, चंदन, बांस, नारियल व बेंत के वृक्ष पाये जाते हैं।

(ii) मानसूनी वन (Rain forest) – इस प्रकार के वनों में वार्षिक वर्षा 100–200 से.मी. तक होती है। भारत का अधिकांश वन क्षेत्र इसी के अन्तर्गत आता है। इन्हें मानसूनी एवं पतझड़ वन या उष्णकटिबंधीय शुष्क पतझड़ वन कहते हैं। ये वन यू.पी., बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश व केरल में पाये जाते हैं। इन वनों में साल, शीशम, सागवान, नीम, चंदन, जामुन व सेमल के वृक्ष पाये जाते हैं।

(iii) मरूस्थलीय या शुष्क वन (Desert or Dry forests) – वे वन क्षेत्र जहाँ पर वार्षिक वर्षा 100 से.मी. से कम होती है। ये वन राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, यू.पी. के मैदानी भाग एवं कर्नाटक में पाये जाते हैं। इन वनों में बबूल, नागफनी, आक, कंटीली झाड़ियाँ, बेर व ताड़ के वृक्ष पाये जाते हैं।

(iv) पर्वतीय वन (Hilly forest) – पहाड़ी क्षेत्रों में पाये जाने वाले वन जिन्हें अर्ध उष्ण या शीतोष्ण वन भी कहते हैं। पहाड़ों की विभिन्न ऊंचाइयों पर भिन्न–भिन्न आकार के वन पाये जाते हैं। हिमालय, नीलगिरी की पहाड़ियों आसाम एवं पश्चिमी बंगाल में ये वन पाये जाते हैं। इनमें औषधीय वृक्ष पाये जाते हैं।

(v) डेल्टाई वन (Delta forest) – ये वन गंगा, ब्रह्मपुत्र, महानदी, गोदावरी, कृष्णा आदि के डेल्टाई क्षेत्रों में पाये जाते हैं। इसके अन्तर्गत उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, कर्नाटक, गुजरात, केरल, आंध्र प्रदेश आदि क्षेत्र आते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं– पुलिन वन एवं ज्वारीय वन।

(vi) नदी तट वन (River bank forest) – ये वन नदी के तटों पर पाये जाते हैं तथा इनमें आने वाली बाढ़ से पोषित होते हैं। इनमें इमली, जामुन, शीशम एवं खैर आदि के वृक्ष आते हैं।

वनों से लाभ (Benefits from Forests)

वनों से अर्थव्यवस्था व समाज को बहुत से लाभ प्राप्त होते हैं। इनमें से कुछ निम्न प्रकार हैं–

(i) वन पर्यावरणीय संतुलन को ठीक करने के साथ–साथ प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाते हैं।

(ii) वनों से ईंधन एवं जलाऊ लकड़ी प्राप्त होती है।

(iii) साल, सागवान, देवदार, शीशम, चंदन आदि से औद्योगिक लकड़ियाँ प्राप्त होती है।

(iv) वनों से लाख, गोंद, कत्था, मोम, बांस, बेंत व जड़ी–बूटियाँ भी प्राप्त होती हैं।

(v) वनों पर कागज, दियासलाई, रबर, वार्निश, रंग व तेल आदि उद्योग भी आश्रित है।

(vi) वनों से प्राप्त वस्तुओं से लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास होता है।

(vii) वनों से पशुओं को पौष्टिक आहार प्राप्त होता है जिससे पशुधन के अन्य लाभ प्राप्त होते हैं।

(viii) वन भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं। बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित करने में सहायक है।

(ix) मानसून की अनिश्चितता को नियंत्रित करके अनावृष्टि व अल्पवृष्टि से बचाते है।

(x) जलवायु को सम करते हैं और बाढ़ की विभीषिका से बचाते हैं। वन क्षेत्रों की नदियों में बाढ़ कम आती है।

(xi) मरूस्थलीकरण को रोकने के लिए वनों का प्रसार आवश्यक होता है।

(xii) वनों के कारण सतही एवं भूमिगत जल संसाधन भी सुरक्षित रहते हैं।

(xiii) प्राकृतिक सौन्दर्य को बनाये रखकर पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

राष्ट्रीय वन नीति (National Forest Policy)

1988 में प्रदत्त इस नीति के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित है–

(i) पर्यावरणीय स्थिरता बनाये रखना एवं पारिस्थितिक संतुलन का पुनर्निर्माण।

(ii) प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण।

(iii) भूक्षरण को रोककर भूसंरक्षण करना।

(iv) वनों का विस्तार बढ़ाना।

(v) ईंधन, पशु चारा और इमारती लकड़ी की आवश्यकता पूरी करना।

(vi) वनोपज को बढ़ाना।

(vii) वनोपज की उपयोगिता को प्रोत्साहित करना एवं उनके विकल्पों की उपलब्धि को बढ़ाना।

(viii) महिलाओं के सहयोग से वन संरक्षण हेतु जन चेतना द्वारा वन संरक्षण को आन्दोलन के रूप में चलाना।

राष्ट्रीय वन नीति का मुख्य उद्देश्य 33 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र को वनों से आच्छादित करना है। इसी प्रकार की नीति राजस्थान सरकार ने भी बनाई है जो वनों के संरक्षण एवं विस्तार पर कार्य कर रही है।

निर्वनीकरण (Deforestation)

वनों के विनाश या निरन्तर कटाई से निर्वनीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है। निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु वृक्षों की कटाई की जाती है–

(i) इमारती लकड़ी

(ii) कृषि योग्य भूमि का विकास

(iii) औद्योगिक विकास

(iv) परिवहन हेतु सड़क निर्माण

(v) जलाऊ लकड़ी

(vi) कागज निर्माण

(vii) खनन कार्य

(viii) भवन निर्माण सामग्री

वनों के विनाश के कारण पर्यावरण पर निम्न प्रभाव पड़ते हैं–

(i) वन्य जीवों एवं वनस्पतियों के आवासों का नष्ट होना।

(ii) मृदा अपरदन से शीर्ष उपजाऊ मृदा का विनाश।

(iii) मृदा अपरदन एवं अतिवृष्टि की स्थिति में बाढ़ आना।

(iv) घास के मैदानों का नाश।

(v) वनोपज जैसे गोंद, औषधी, रेजिन, फल आदि में कमी।

(vi) पर्यावरण असंतुलन से अनावृष्टि।

वनों के विनाश को रोकने के उपाय

वनों के विनाश को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय करना अत्यन्त आवश्यक है–

(i) सुरक्षित वन क्षेत्रों में खनन की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

(ii) इमारती लकड़ी के साथ लोहे व अन्य निर्माण सामग्री का उपयोग करना।

(iii) पौधों के औषधिय एवं धार्मिक महत्व का प्रचार प्रसार करना ताकि मनुष्य उनकी कटाई न करें।

(iv) जितने वृक्ष काटे जाएं उनसे कई गुना अधिक संख्या में वृक्ष लगाये जाएं।

(v) जलाऊ लकड़ी के लिए तीव्र गति से बढ़ने वाले वृक्षों का रोपण करना।

(vi) घरों में रसोईघरों में बायोगैस एवं एल.पी.जी. गैस के उपयोग को बढ़ावा देना।

(vii) वन संरक्षण कानूनों की सख्ती से पालना करवाना।

खाद्य संसाधन (Food Resources)

प्राकृतिक एवं कृत्रिम रूप से उत्पादित पदार्थ जिन्हें मनुष्य अपने भोजन के रूप में काम में लेता है, खाद्य संसाधन कहलाते हैं। मूल रूप से मनुष्य के खाद्य आपूर्ति स्त्रोत निम्न है–

;पद्ध कृषि फसलें (Agricultural crops) – सम्पूर्ण विश्व की खाद्य आपूर्ति का अधिकतम भाग कृषि फसलों से आता है। वनस्पतियों की लगभग तीन हजार जातियाँ कृषि उपयोग हेतु परखी जा चुकी है। इनमें से 300 जातियाँ ही भोजन प्राप्ति हेतु उगाई जाती है। लगभग 100 जातियों का बड़े स्तर पर उत्पादन होता है। लेकिन 20 फसलों पर ही सम्पूर्ण विश्व की खाद्य आपूर्ति निर्भर है।

(ii) पालतू पशु (Domestic animals) – प्राचीन काल से ही आदिमानव अपना भोजन पशुओं से प्राप्त करता रहा है। आधुनिक विश्व में भी खाद्य आपूर्ति के लिए गाय, भैंस, ऊंट, भेड़, बकरी, सुअर आदि से प्राप्त विभिन्न उत्पादों पर निर्भर है। इसके अलावा मुर्गी एवं अन्य पक्षियों का उपयोग भी भोजन प्राप्ति हेतु किया जाता है।

(iii) मछली (Fish) – विश्व का बड़ा हिस्सा मछली आधारित खाद्य पर निर्भर है। एशिया व यूरोप के कई देश इस प्रोटीन युक्त भोजन का मुख्य आधार है। इसके लिए अनेक प्राकृतिक व कृत्रिम जल स्त्रोतों में मछलियों व अन्य खाने योग्य जल जीवों का उत्पादन किया जाता है। यह उत्पादन स्वच्छजलीय या समुद्री जलीय हो सकता है जिसमें कैटफिश, मिल्क फिश, मिनों, क्रेफिश आदि मछलियों का उत्पादन करते हैं।

अतिचारण के प्रभाव (Effects of Overgrazing)

पशुओं का चारागाह में चारण सामान्य प्रक्रिया है लेकिन चारण जन्तुओं के कम घनत्व पर चारण का विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता अपितु व्यवस्थित चारण एवं जन्तुओं के अपशिष्ट, खाद के रूप में मिलने के कारण पौधों की वृद्धि होती है। लेकिन चारण जन्तुओं का घनत्व अधिक हो तो पर्यावरण पर अनेक विपरीत प्रभाव पड़ते हैं। विश्व के भूमध्यसागरीय देशों विशेषकर तुर्की, यूनान, उत्तरी अफ्रीकी तट एवं पश्चिमी एशिया में अत्यधिक

पशुचारण का प्रभाव देखने को मिलता है। भारत में हिमालय के ढालों, दक्षिण के पठारी भाग एवं राजस्थान में अनियंत्रित पशुचारण से पर्यावरण को काफी क्षति हो रही है। अतिचारण के कारण पड़ने वाले प्रभाव निम्न हैं–

(i) अतिचारण के फलस्वरूप मृदा अपरदन की दर बढ़ जाती है तथा मृदा की उर्वरता नष्ट हो जाती है।

(ii) अतिचारण से संवेदनशील पौधों की प्रजातियाँ विलुप्त हो जाती है तथा उनके स्थान पर कंटीली झाड़ियों एवं अनुपयोगी प्रजातियों का प्रभुत्व बढ़ जाता है।

(iii) दूरदराज से आये पशु कभी–कभी अपने साथ नये खरपतवार एवं बीमारियाँ लाते हैं जो अन्य पशुओं के लिए घातक होती है।

(iv) पशुओं को खुले चारागाहों में छोड़ने पर उनके द्वारा त्यागा हुआ अपशिष्ट एकत्रित हो वर्षा जल के साथ बहकर जल स्त्रोतों में पहुंच जाता है। तथा इन्हें प्रदूषित कर देता है।

(v) पशुओं का अपने आवासों से चारागाहों तक पंक्तिबद्ध विचरण करने से उनके खुरों से मिट्टी धीरे–धीरे कट जाती है जो वर्षा जल के साथ बहकर गली (Gullies) का निर्माण कर देती है। मृदा की समतलता खत्म हो जाने से भूमि कृषि योग्य नहीं रहती।

(vi) अत्यधिक पशुचारण से धरातल की परिवर्तनशीलता बढ़ जाती है। फलस्वरूप धरातलीय वातावरण ठण्डा हो जाता है। तथा वर्षा की मात्रा घट जाती है।

कृषि के प्रभाव (Effects of Agriculture)

कृषि विश्व का सबसे पुराना एवं बड़ा उद्योग है। मानव की जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ कृषि में भी तीव्र विस्तार हुआ। विश्व की आधे से अधिक जनसंख्या का जीवनयापन कृषि आधारित है। कृषि का विकास मूलतः दो रूपों में हुआ – (i) कृषि क्षेत्र का विस्तार (ii) प्रति हैक्टेयर उत्पादन में वृद्धि। इसके परिणामस्वरूप एक तरफ खाद्य उत्पादन में वृद्धि हुई तो दूसरी ओर वन क्षेत्र एवं मृदा की गुणवत्ता का ह्रास हुआ। कृषि का पर्यावरणीय प्रभाव मूलतः निम्न कारणों से पड़ता है–

(i) कृषि क्षेत्र में विस्तार (Expansion of agricultural area) – कृषि क्षेत्र में विस्तार के परिणामस्वरूप वनों का विनाश, मृदा अपरदन, अतिचारण, मरुस्थलीकरण जैसे कुप्रभाव पड़ते हैं।

(ii) कृषि प्रक्रियाएं (Agricultural processes) – प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादन में वृद्धि हेतु कृषि प्रक्रिया में अनेक परिवर्तन हुए जिसके फलस्वरूप मृदा अपरदन में वृद्धि, जल स्त्रोत एवं मृदा का निम्नीकरण, मरुस्थलीकरण, उर्वरता का ह्रास, लवणता, विषाक्त रसायनों का एकत्रण, जल प्रदूषण, सुपोषीकरण आदि अनेक प्रभाव पड़ते हैं।

(iii) कृषि उत्पादों का वितरण –आधुनिक कृषि में उत्पादों के वितरण हेतु ट्रक, मालगाड़ी आदि प्रयोग में लाये जाते हैं जिनसे प्रदूषण की समस्या बढ़ती है। प्राचीन कृषि में कृषि उत्पादों का वितरण बैलगाड़ी, ठेलागाड़ी आदि से किया जाता था जो प्रदूषण रहित थे।

आधुनिक कृषि वैज्ञानिक तरीकों से की जा रही है जिससे कृषि उत्पादन में क्रान्ति आ गई है। प्राचीन समय में कृषि अवैज्ञानिक तरीकों से की जाती थी तो उत्पादन भी कम था। हरित क्रान्ति के प्रथम 35 वर्षों में कृषि उत्पादन दुगुना हो गया लेकिन इससे पर्यावरण को भी काफी क्षति हुई है। भारत में जो कभी गेहूँ, चावल जैसे खाद्यानों का आयात करता था वहीं आज इस क्षेत्र में आत्मनिर्भर है। आधुनिक कृषि में निम्नलिखित वैज्ञानिक उपलब्धियों का उपयोग किया जाता है–

(i) उन्नत बीजों का उपयोग

(ii) पोषक तत्वों एवं उर्वरकों का उपयोग

(iii) फसलों की कीटों एवं पीड़कों से सुरक्षा

(iv) फसलों की कवक, जीवाणु, विषाणु जनित बीमारियों से रक्षा

(v) आधुनिक तरीकों से सिंचाई

(vi) पर्याप्त ऊर्जा संसाधनों का उपयोग।

आधुनिक कृषि में विभिन्न वैज्ञानिक उपलब्धियों के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रभाव पर्यावरण पर उत्पन्न होता है जो निम्न प्रकार है–

(i) कृषि विस्तार क्षेत्र में वृद्धि के कारण प्राकृतिक वन एवं वनस्पतियाँ नष्ट हो गयी जिसके कारण मृदा अपरदन में वृद्धि हुई। मृदा के अपरदन के कारण ऊपरी सतह से उपस्थित पोषक तत्व बह कर चले गये जिससे मृदा की उर्वरता में कमी आ गई।

(ii) अपरदन के परिणामस्वरूप विभिन्न जल स्त्रोतों झीलों, तालाबों, नदियों आदि में भारी मात्रा में मृदा तलछट जमा हो जाते हैं। इसके कारण जल की गुणवत्ता में कमी हो जाती है। जल स्त्रोतों की गहराई कम हो जाती है। मत्स्य उद्योग पर भी प्रभाव पड़ता है।

(iii) आधुनिक कृषि में पैदावार बढ़ाने हेतु प्रति वर्ष प्रति हैक्टेयर की दर से 30–250 किग्रा नाइट्रोजन एवं 15–125 किग्रा फॉस्फोरस उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। इनका आधा भाग फसलों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। तथा कुछ हिस्सा वाष्पित हो वायुमण्डल में मिल जाता है। शेष उर्वरक भूमि प्रदूषण के साथ–साथ जल को प्रदूषित कर जल स्त्रोतों का सुपोषीकरण करते हैं। इसके अतिरिक्त उर्वरकों के अधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरता एवं रासायनिक गुणवत्ता जैसे क्षारीयता व अम्लीयता भी परिवर्तित हो जाती है।

(iv) कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु कृषि फसलों को कीटों,

पीड़कों आदि से बचाने के लिए विभिन्न कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है। ये कृषि रसायन पौधों व मनुष्यों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। वायु, जल व मृदा प्रदूषण करते हैं तथा जैव आवर्द्धन द्वारा खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर जीवों तक पहुंच जाते हैं।

(v) कृषि संबंधी कारकों से रेगिस्तान का विस्तार भी होता है। जिसमें अतिचारण, उपयुक्त कृषि पद्धति प्रयोग न करना, चारागाहों को कृषि भूमि में बदलना, अत्यधिक सिंचाई, विषैले कृषि रसायनों का प्रयोग आदि कारक प्रमुख है।

(vi) कृषि विस्तार के फलस्वरूप जैव विविधता में कमी आई है इसके कारण अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं। कई संकटग्रस्त हो गयी है।

(vii) कृत्रिम उर्वरकों के प्रयोग, वनों के विनाश व मृदा अपरदन के कारण प्राकृतिक जैव भू रासायनिक चक्रों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

(viii) आधुनिक कृषि में जीवाश्मीय ईंधन का उपयोग, खरपतवार जलाना, वनों में आग आदि से ग्रीन हाउस गैसों की सान्द्रता में वृद्धि हुई है जिसके फलस्वरूप वायुमण्डल के तापक्रम में वृद्धि हुई है।

विश्व खाद्य समस्याएं एवं इसके कारण
(World food Problems and its reasons)

विश्व में हरित क्रान्ति के प्रथम 35 वर्षों में कृषि खाद्य उत्पादन में लगभग दुगुनी वृद्धि हुई। लेकिन इसके साथ–साथ पर्यावरण की क्षति भी हुई। उदाहरणार्थ फिलीपीन्स के अन्तर्राष्ट्रीय चावल शोध संस्थान में चावल की विशिष्ट उप प्रजाति को हरित क्रान्ति द्वारा एक उच्च उत्पादक किस्म के रूप में विकसित किया गया लेकिन इसके लिए भारी मात्रा में उर्वरकों की आवश्यकता पड़ती है जो पर्यावरण के लिए नुकसानदायक है। इसी क्रम में अन्तर्राष्ट्रीय मक्का एवं गेहूँ सुधार संस्थान मेक्सिको में मक्का की रोगरोधी प्रजाति विकसित की गई। हरित क्रान्ति द्वारा गेहूँ की बौनी किस्में विकसित कर भारत में गेहूँ का रिकार्ड उत्पादन किया गया। इस प्रकार की सफलताओं के बाद भी आज भी विश्व के कई देश खाद्य की अपर्याप्तता का सामना कर रहे हैं। कुपोषण की समस्या विश्वव्यापी है जिसके प्रमुख दो कारण है–

(i) उपलब्ध भोजन में पर्याप्त ऊर्जा की कमी।

(ii) उपलब्ध भोजन में पौष्टिक तत्वों जैसे विटामिन्स, प्रोटीन, खनिज लवणों का अभाव या कमी।

इनके कारण बच्चों का विकास बाधित होता है तथा उनमें बीमारियों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ जाती है।

विश्व खाद्य समस्या के महत्वपूर्ण कारण निम्नलिखित है–

(i) जनसंख्या वृद्धि (Population growth) – विश्व में बढ़ती जनसंख्या खाद्य आपूर्ति समस्या एवं कुपोषण का सबसे बड़ा कारण है। विश्व खाद्य उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ जनसंख्या में तीव्र वृद्धि भी हो रही है। इस कारण से प्रति व्यक्ति खाद्य आपूर्ति पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा तथा आज भी खाद्यानों की कमी महसूस की जा रही है।

(ii) भौगोलिक परिस्थितियाँ (Geographical conditions) –अनेक देशों व क्षेत्रों की भौगोलिक परिस्थितियाँ इस प्रकार की है कि वहाँ पर खाद्यानों के उत्पादन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं है। जैसे भारत में पश्चिमी राजस्थान।

(iii) प्राकृतिक आपदाएं (Natural calamities) – विनाशकारी बाढ़, भूकम्प, सूखा, तूफान, कीटों व बीमारियों आदि से कृषि उत्पादन अत्यधिक प्रभावित होता है।

(iv) वितरण प्रणाली (Distribution system) – अनाजों के पर्याप्त भण्डारण के पश्चात् भी खाद्य वितरण प्रणाली के दोषपूर्ण अव्यवस्थित होने से खाद्य समस्या यथावत बनी रहती है।

विश्व खाद्य आपूर्ति में वृद्धि के लिए निम्न उपाय किये गए हैं–

(i) कृषि योग्य भूमि का लगातार विस्तार।

(ii) सिंचाई के साधनों एवं सिंचाई की व्यवस्था में सुधार।

(iii) जैव उर्वरकों की पर्याप्त व्यवस्था।

(iv) जल संवर्धन का उपयोग।

(v) उन्नतशील उच्च गुणवत्ता युक्त बीजों का प्रयोग।

(vi) उचित वितरण प्रणाली।

जल संसाधन
(Water Resources)

जीवन का आधार जल है। जल का 97.3 प्रतिशत भाग महानगरों एवं अन्तर्देशीय सागरों में तथा शेष 2.7 प्रतिशत हिमनदी, बर्फ शीर्षो एवं मीठे पानी की झीलों, नदियों तथा भूमिगत जल के रूप में पाया जाता है। जल के वितरण एवं प्राप्ति के अनुसार इसे दो प्रकारों में बांटा जा सकता है–

I. स्थलीय जल संसाधन II. महासागरीय जल संसाधन

I. स्थलीय जल संसाधन
(Terrestrial Water Resources)

संसार की समस्त जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग नदियों की घाटियों, डेल्टाओं, नहरों के प्रवाह क्षेत्रों तथा झील प्रदेशों में बना रहता है। इन जल संसाधनों में नदी, नालें, झीलें, तालाब व तलैया आदि सम्मिलित होते हैं।

महत्व (Importance)

स्थलीय जल संसाधनों का महत्व निम्न प्रकार है–

(i) पीने के पानी हेतु

(ii) सिंचाई हेतु

(iii) भोज्य पदार्थ एवं मछली प्राप्ति

(iv) कारखानों के लिए पानी

(v) जल विद्युत परिवहन

(vi) वाष्प शक्ति उत्पादन

(vii) वर्षा से प्राप्त जल की निकासी हेतु

(viii) नौपरिवहन मार्ग की उपलब्धि

(ix) मृदा निर्माण

(x) वायुमण्डलीय आर्द्रता में वृद्धि

(xi) प्राकृतिक सौन्दर्यता का निर्माण

(xii) नदियों द्वारा देश–प्रदेश के मध्य सीमा निर्धारण

(xiii) बस्तियों का बसाव

(xiv) स्वास्थ्य के विकास में सहायता।

जल संसाधन जहाँ उपयोगी है वहीं पर कभी–कभी विनाश या रोगों का कारण भी बन जाते हैं। नदियों में बाढ़ से जन–धन दोनों की हानि होती है।

महासागरीय जल संसाधन (Oceanic Water Resources)

हमारी पृथ्वी का लगभग 72% भाग महासागरीय जल से आच्छादित है जिसकी औसत गहराई 3.5 कि.मी. है। प्रशान्त महासागर में पृथ्वी का लगभग आधा जल समाया हुआ है। अन्य महासागर अंध महासागर, हिन्द महासागर एवं आर्कटिक महासागर।

महासागरीय जल की मुख्य विशेषताएं

(i) इस जल में लगभग 3.5% मात्रा लवण की होती है। इसमें सोडियम क्लोराइड सबसे प्रमुख है।

(ii) सामान्य जल से इसका घनत्व कुछ अधिक होता है।

(iii) महासागरों में गतियाँ, लहरें व ज्वार भाटा होता है।

(iv) इसमें अनेक जन्तु व कई प्रकार के पौधें पाये जाते हैं।

(v) स्थल व समुद्र की सम्पर्क रेखा को समुद्र तल कहते हैं।

महासागरों का मनुष्य के लिए उपयोग (Uses of Oceans for Man)

(i) जलवायु को प्रभावित कर वर्षा कराते हैं।

(ii) खाने के लिए मछलियाँ प्राप्त होती हैं।

(iii) पेट्रोल, प्राकृतिक गैस व अभ्रक जैसे कुछ खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं।

(iv) अन्तर्राष्ट्रीय परिवहन (98%) इसी जल द्वारा होता है।

(v) लहरों व ज्वार भाटे से शक्ति उत्पन्न की जाती है।

(vi) महासागरों से प्राप्त वनस्पति तटीय प्रदेश के निवासियों द्वारा भोजन के रूप में काम में ली जाती है।

भूमिगत जल (Underground Water)

भूमिगत जल पीने एवं सिंचाई के रूप में काम आता है। इसका उपयोग अब उद्योगों में भी होने लगा है। वर्षा के द्वारा भूमिगत जल स्तर में वृद्धि होती है तथा विभिन्न कार्यों हेतु पानी आसानी से सुलभ होने लगता है। कई वर्षों से वर्षा काल के दौरान कम व अनियमित वर्षा एवं अनियमित भूजल दोहन के कारण भूमिगत जल स्तर गिरता जा रहा है। इसके अतिरिक्त खनन, हैडपम्प, बोरिंग, कृषि हेतु जल के लिए गहराई तक खुदाई भी भूमिगत जल स्तर गिरने के प्रमुख कारण है। भारत में भूमिगत जल स्तर को गिरने से रोकने के लिए निम्न उपाय है–

(i) कम पानी में अधिक उपज देने वाली फसलें उगाना।

(ii) नदियों के पेंदें में कुएं बनाकर जल स्तर बढ़ाना।

(iii) जल के अनावश्यक उपयोग को घटाना।

(iv) गांव के तालाब, नाडियों आदि का पुनरुद्धार।

(v) वर्षा जल को छत पर रोक कर संचयन करना।

(vi) जल ग्रहण क्षेत्र का प्रबंधन करना।

भारत में वार्षिक पुनः चार्ज रेट 24 मिमी. /वर्ष से 198 मिमी. /वर्ष है। अगर समय रहते पानी की लम्बी अवधि तक उपयोग की योजना नहीं बनाई गई तो मनुष्य आपस में पानी के लिए लड़ेंगे और समाज में अशांति उत्पन्न होकर गृहयुद्ध जैसी भयावह स्थिति बनेगी। हमारे देश में विभिन्न राज्यों में भूमिगत जल का उपयोग का प्रतिशत निम्न तालिका में प्रदर्शित है–

खनिज संसाधन (Mineral Resources)

खनिज संसाधन का अर्थ (Meaning of Mineral Resources)

सामान्य शब्दों में वे सभी पदार्थ जो खनन (mining) द्वारा प्राप्त किये जाते हैं, खनिज कहलाते हैं। जैसे– कोयला, पेट्रोलियम एवं धात्विक अयस्क (ores)। वैज्ञानिक शब्दावली में खनिज का तात्पर्य एक ऐसे अजैव (inorganic) पदार्थ से है जो एक विशिष्ट रासायनिक संगठन (composition) रखता हो तथा उसके कणों के मिश्रण से शैल रचना होती हो। सामान्यतः सभी खनिज रवेदार (crystalline) होते हैं। कुछ खनिज एक ही तत्व से निर्मित होते हैं, जैसे– हीरा, कार्बन आदि, परन्तु अधिकांश खनिज दो तत्वों वाले होते हैं, जैसे– लोहे और सल्फर आदि के पाइराइट्स (Pyrites)। खनिज के अनेक गुणधर्म (properties) होते हैं– क्रिस्टलीय रूप, कठोरता, विशिष्ट घनत्व (specific gravity), रंग, चमकीलापन या

चमक (lustre) और पारदर्शिता (transparency), रेखित (streak), विभंगित एवं विदलनी (cleavage) संरचना, आदि।

मानव और खनिज संसाधन

(Man and Mineral Resources)

हमारी सभ्यता धात्वीय खनिजों (Metallic minerals) पर आधारित है। खनिज पदार्थ संसार के सबसे अधिक मूल्यवान संसाधनों में से हैं। किसी न किसी रूप में वे मनुष्य के लिये परमावश्यक हैं। नमक, आयोडीन और फ्लुओरीन जैसे खनिज तो मनुष्य के भोजन के अंग हैं; इनके बिना मनुष्य स्वस्थ नहीं रह सकता। हमारी मशीनें धातुओं की बनी हैं, और वे खनिज ईंधनों से चलती हैं। संसार के रेलमार्गों द्वारा जितना वजन खनिज पदार्थों का ढोया जाता है, इतना वजन संसार के अन्य सभी संसाधनों का भी मिलकर रेल द्वारा नहीं ढोया जाता।

मानव सभ्यता के इतिहास में, अब से लगभग 8 लाख वर्ष पूर्व मनुष्य फिंलट (flint) प्रस्तर के औजार बनाने लगा था। बहुत लम्बे समय तक प्रस्तर शिल्प (stone tools) का प्रयोग करने के बाद अब से लगभग 20 हजार वर्ष पूर्व मनुष्य धातुओं का प्रयोग करना सीख गया था। सबसे पहले मनुष्य ताँबे के छोटे औजार बनाना जानता था। वह काल ताम्र–युग (Copper-age) कहलाता है। उसके पश्चात् मनुष्य ने कांसे का प्रयोग करना सीखा; वह काल कांस्य का युग (Bronze age) कहलाया। वर्तमान काल को यंत्र–युग कहा जाता है। आज की सभ्यता, शक्ति और यंत्रों की सभ्यता है। आज कोयला, खनिज तेल और विद्युत के कारखाने चल रहे हैं; तथा आण्विक खनिजों (atomic minerals) ने मनुष्य के हाथों में अपार शक्ति सौंप दी है। इस प्रकार वर्तमान सभ्यता 'खनिज सभ्यता' (mineral civilization) कहलाती है।

भारत में खनिजों के खनन एवं उपयोग का इतिहास सैंकड़ों वर्ष पुराना है। प्राचीन काल में हमारे देश में लोहा, तांबा, सीसा, जस्ता, स्वर्ण, चांदी एवं कोबाल्ट का उत्पादन किया जाता था। प्राचीन खनन कार्य एवं धातु निष्कर्षण के चिह्न आज राजस्थान, बिहार, एवं दक्षिणी भारत में अनेक स्थानों पर मिलते हैं। वर्तमान में भारत में कोयला, लौह–अयस्क, मैगनीज, अयस्क, अभ्रक, स्वर्ण, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस, ताम्र अयस्क, सीसा एवं जस्ता अयस्क, कांच बालू (Glass sand), क्रोमाइट, कायनाइट, मेग्नेसाइट, सिलिमेनाइट, स्टीएटाइट, जिप्सम, मोनेजाइट, बेरिल, चूना–पत्थर, डोलोमाइट, मुल्तानी मिट्टी एवं बॉक्साइट का उत्पादन किया जाता है। इनके अतिरिक्त अल्प मात्रा में उपलब्ध कई अन्य खजिनों जैसे– एन्टिमनी, ऐपाटाइट, बेराइट, ऐस्बेस्टोस, फेल्सपार, ग्रेफाइट, टंगस्टन एवं जरकॉन आदि का उत्पादन भी होता है।

भारत के प्रमुख आर्थिक खनिज

भारत में निम्न खनिजों के विशाल निक्षेप पाये जाते हैं:–

1. लौह अयस्क एवं मैगनीज अयस्क
2. ऐल्युमिनियम–मैग्नीशियम एवं टाइटेनियम के अयस्क
3. उच्चताप सह खनिज
4. दुर्लभ मृदा धातु (Rare earth)
5. अभ्रक
6. थोरियम एवं रेडियोऐक्टिव खनिज

उपर्युक्त खनिजों के मामले में भारत की स्थिति सुखद है।

अल्प मात्रा में पाये जाने वाले आर्थिक महत्व के खनिज : ऐसे खनिज जो अल्प मात्रा में पाये जाते हैं, परन्तु उनका आर्थिक महत्व काफी होता है, वे हैं–

1. बिस्मथ	2. केडमियम	3. सीसा
4. ग्रेफाइट	5. पारा	6. निकल एवं कोबाल्ट
7. प्लेटिनम	8. चांदी	9. गंधक
10. टिन	11. टंगस्टन	12. जस्ता
13. पेट्रोलियम		

इस वर्ग में आने वाले खनिजों के संबंध में भारत की स्थिति निराशाजनक है। इन खनिजों का अन्य देशों से आयात करना पड़ता है।

सामरिक खनिज : ये आवश्यक खनिज जिनकी देश के भीतर पूर्ति अपर्याप्त अथवा स्थितिज रूप से अपर्याप्त (Potentially inadequate) होती है उन्हें सामरिक खनिज कहते हैं। प्रत्येक देश के लिए सामरिक खनिज भिन्न हो सकते हैं।

खनिजों का वर्गीकरण

(Classification of Minerals)

खनिजों के गुण धर्म एवं उपयोग के अनुसार खनिजों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया है:–

(अ) धात्विक खनिज (ब) अधात्विक खनिज

(अ) धात्विक खनिज (Metallic minerals) : धातुएं खनिज अयस्कों के परिष्करण से प्राप्त होती है और धात्विक खनिजों को उनके गुणों के अनुसार निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया है:–

(i) बहुमूल्य खनिज–सोना, चांदी

(ii) लौह खातु खनिज–लोहा, टंगस्टन

(iii) अलौह धातु खनिज–सीसा–जस्ता, तांबा, ऐल्युमिनियम

(iv) रेडियोधर्मी खनिज–यूरेनियम

(v) अन्य धातु खनिज–मैग्नीशियम, बेरिलियम, केडमियम।

(ब) अधात्विक खनिज : अधात्विक खनिजों का अत्यधिक औद्योगिक उपयोग है। ये सीधे ही उपयोग में लिये जा सकते हैं और ये औद्योगिक उपयोग के अनुसार ही वर्गीकृत किये गये हैं:–

(i) औद्योगिक खनिज

(अ) उच्चतापसह एवं ताप प्रतिरोधी खनिज : कायनाइट, सिलीमैनाइट, एण्डालूसाइट, ग्रेफाइट, डोलोमाइट, फायर क्ले, ऐस्बेस्टॉस, अभ्रक

(ब) कांच एवं सिरेमिक खनिज : क्वार्ट्ज, फैल्सपार, वोलैस्टोनाइट, केओलिन क्ले

(स) उर्वरक एवं रासायनिक खनिज : रॉक फॉस्फेट, पायराइट, बैराइट, फ्लुओराइट

(द) फिलर, अपघर्णी एवं अन्य उपयोगी खनिज : फिलर, सोपस्टोन, पायरोफाइलाइट, बेन्टोनाइट, फुलर्स अर्थ, सिलिसियस अर्थ, कैल्साइट, अपघर्षी–गारनेट, कोरण्डम, अन्य उपयोगी–लाइमस्टोन, रेड ऑकर, वर्मीक्युलाइट आदि।

(ii) रत्न खनिज : गारनेट, पन्ना, कोरण्डम, एक्वामेराइन, एमिथिस्ट एवं क्वार्ट्ज मणिभ

(iii) सजावटी एवं इमारती शैल समूह : मार्बल, ग्रेनाइट, लाइमस्टोन, शैल, स्लेट, सेण्डस्टोन, पट्टी कातला आदि

(iv) ईंधनोपयोगी खनिज : लिग्नाइट, प्राकृतिक तेल एवं गैस।

कुछ खनिजों का विस्तृत वर्णन यहाँ किया जा रहा है:–

लौह धातु खनिज (Ferrous Mineral)

इस वर्ग में लोहा, मैगनीज, निकल, क्रोमियम, कोबाल्ट, टंगस्टन, मोलिब्डेनम, टाइटेनियम आदि खनिजों को सम्मिलित किया जाता है। इन खनिजों में से राजस्थान में टंगस्टन के महत्त्वपूर्ण एवं लोहा व मैगनीज के अयस्क अल्प मात्रा में पाये जाते हैं।

टंगस्टन (Tungsten)

इस धातु का गलनांक सभी धातुओं से अधिक 1350°C होता है। अतः यह उच्चताप पर भी नहीं पिघलती है। विद्युत की सुचालक होने से विद्युत बल्बों में फिलामेंट इसी धातु के बनाये जाते हैं। लोहे एवं टंगस्टन से बनी मिश्र धातु से इस्पात काटने से यंत्र, टंगस्टन कार्बाइड से छिद्रण बिट्स (drilling bits) आदि बनाये जाते हैं। इस धातु से राडार, भारी बन्दूकों की नलियां, टैंक भेदी यंत्र, जेट इंजिन के कल–पुर्जे, प्रक्षेपास्त्र आदि बनाये जाते हैं। अतः इसका सामरिक महत्त्व है। इनके अतिरिक्त एक्स किरण मशीनों, विद्युत संयंत्रों, रंगाई–छपाई उद्योगों में भी यह धातु प्रयुक्त होती है। सही मायने में यह औद्योगिक उपयोग की धातु न होकर, सामरिक महत्त्व की धातु है।

खनिज अयस्क

टंगस्टन के प्रमुख अयस्क निम्न हैं:–

वुलफ्रेमाइट (wolframite) (Fe, Mn) WO_4

शीलाइट (scheelite) $CaWO_4$

फर्बराइट (ferberite) $FeWO_4$

हुबनेराइट (hubnerite) $MnWO_4$

व्यावसायिक उत्पादन के लिए अयस्क में टंगस्टन की मात्रा 60-70% होनी चाहिए।

वितरण

देश में टंगस्टन के व्यावसायिक निक्षेप राजस्थान में ही पाये जाते हैं। राजस्थान के अतिरिक्त महाराष्ट्र, हरियाणा एवं पश्चिमी बंगाल राज्यों में यह खनिज अल्प मात्रा में मिलता है। राजस्थान में टंगस्टन के प्रमुख निक्षेप नागौर जिले के डेगाना एवं सिरोही जिले के बाल्दा क्षेत्र में पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त डूंगरपुर जिले के अमरतिया, उदयपुर जिले के कुण, पाली जिले के बराठियां, अजमेर जिले के लादेरा–साकून क्षेत्र में टंगस्टन अयस्क होने के संकेत मिले हैं।

लौह खनिज (Iron Minerals)

मनुष्य के जीवन में लोहे का अत्यधिक उपयोग है। यह उद्योग के लिए आधार धातु है। कोई भी कारखाना, यंत्र, उपकरण लोहे के उपयोग के बिना निर्मित नहीं हो सकते हैं। इस्पात के रूप में यह सर्वत्र उपयोग में आता है। प्राचीन काल और आधुनिक युग में युद्ध के लिए प्रयुक्त अस्त्र–शस्त्र एवं हथियार इसी धातु से बनते हैं। इसके अतिरिक्त वनस्पति उद्योग, वेल्डिंग रोड, कोयले के शुद्धिकरण आदि के लिए उपयोग में आता है।

पटलित लौह अयस्क (spathic iron ore) जिसे सिडेराइट कहते हैं, वनस्पति उद्योग में अत्यधिक उपयोग में लिया जाता है। माइकामय हेमाइट (micaceous hematite) वेल्डिंग रोड बनाने, दलदली लौह अयस्क (iron ore bog) लिमोनाइट कोयले से गैस शुद्धिकरण के काम में एवं मैग्नेटाइट कोयले को साफ करने के काम में लिया जाता है।

भारत में उच्च कोटि के लौह अयस्कों के निक्षेप हैं जिनमें Fe

की मात्रा 65 से 85 प्रतिशत तक है।

खनिज अयस्क

लोहे के निम्न खनिज अयस्क हैः–

1.	मैग्नेटाइट (magnetite) Fe_3O_4	72.4% Fe
2.	हेमेटाइट (hematite) Fe_2O_3	70% Fe
3.	लिमोनाइट (limonite) $Fe_2O_3H_2O$	59-63% Fe
4.	सिडेराइट (siderite) $FeCO_3$	48.2% Fe

उपर्युक्त खनिज अयस्कों में हेमेटाइट एवं मैग्नेटाइट का महत्त्व अत्यधिक है। इनके साथ कभी–कभी अवांछनीय खनिज जैसे क्वार्ट्ज, गंधक, फास्फोरस, मैगनीज, टंगस्टन, टाइटेनियम आदि मिलते हैं।

वितरण

देश में उच्चकोटि के एवं महत्त्वपूर्ण खनिज निचय मिलते हैं। दुनिया के कुल निचयों के 60% से ज्यादा निचय भारत देश में हैं। जो प्रमुखतः उड़ीसा, बिहार, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, केरल, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, गोवा, आसाम, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में हैं। देश में लौह खनिज कैम्ब्रियन पूर्व के शैलों में प्रमुखता से एवं कभी–कभी तृतीय महाकल्प के अवसादों में मिलते हैं।

राजस्थान में लौह निक्षेपों में जयपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा, झुंझुनू, सीकर, करौली एवं दौसा के निक्षेप महत्त्वपूर्ण हैं।

अलौह धातु खनिज (Non-Ferrous Minerals)

इस वर्ग के अन्तर्गत सीसा, जस्ता, तांबा, टिन, ऐल्युमिनियम धातुओं के अयस्कों का अध्ययन किया जाता है। सीसा, जस्ता, तांबा के अयस्कों के राजस्थान में अच्छे निक्षेप हैं। ऐल्युमिनियम के अयस्क भी कुछ मात्रा में मिलते हैं, किन्तु टिन के अयस्क राजस्थान में अभी तक नहीं पाये गये हैं।

राजस्थान में इन खनिजों के दोहन एवं परिशोधन की प्रक्रिया बहुत प्राचीन है जिसके प्रमाण राज्य में फैली पुरानी खदानों व धातुमल ढेरों (slag heep) से मिलते हैं।

इन धातुओं का दैनिक जीवन में उपयोग सर्वविदित है। मानव विकास के क्रम में पत्थर युग के बाद ताम्र युग का कांस्य युग इन धातुओं के प्राचीन समय से हो रहे उपयोग को स्पष्ट करता है।

राज्य में इन धातु अयस्कों के जमाव आर्कियन व प्रोटेरोजोइक काल के भीलवाड़ा, अरावली व देहली महासंघ की शैलों में पाये जाते हैं। जो मुख्यतः द्वि–खनिजी (bi metal) या बहुखनिजी (multi metal) जमाव हैं। राज्य के प्रमुख धात्विक खनिज पट्टियों को स्तरिकी अनुक्रम में निम्न प्रकार वर्गीकृत किया गया है–

देहली महासंघ	– ताम्बा	– खेतड़ी ताम्र पट्टी झुंझुनू, दरीबा, अलवर
	– ताम्बा–जस्ता	– चांग–चित्तौड़, नया खेड़ा, पाली, अजारी–बसन्तगढ़, गोलिया, पिपेला, पट्टी सिरोही
	सीसा–जस्ता	– डेरी–अम्बाजी पट्टी सिरोही व साबरकांटा (गुजरात) कायर – घूघरा घाटी पट्टी अजमेर
अरावल महासंघ	– सीसा–जस्ता	– जावर पट्टी उदयपुर ताम्बा–पादर की पाल, डूंगरपुर, अंजनी, उदयपुर, भूखिया, जगपुरा, आनन्दपुरी बांसवाड़ा
भीलवाड़ा महासंघ	–सीसा–जस्ता –	राजपुरा–दरीबा–सिंदेसर बेटूमी, राजसमंद आगुचा पट्टी, भीलवाड़ा व सांवर पट्टी, अजमेर
	ताम्बा–जस्ता	पुर–बनेड़ा पट्टी भीलवाड़ा

उत्पत्ति

सीसा–जस्ता–ताम्बा की उत्पत्ति मुख्यतः आग्नेय स्त्रोतों से होती है।

ताम्र खनिज (Copper Minerals)

ताम्बे का उपयोग प्राचीन काल से होता रहा है और समय के अनुसार इसकी मांग व उपयोग बढ़ रहा है। वर्तमान में मुख्य रूप से बर्तन, विद्युत उपकरण, विद्युत वितरक तारों, रेडियो, टेलीविजन, वातानुकूलित यंत्रों, टेलीफोन तारों, मशीनरी उपकरण, वायुयानों, हथियारों व युद्ध संबंधी उपकरण आदि बनाने में इसका उपयोग किया जाता है।

खनिज अयस्क

ताम्बे के महत्त्वपूर्ण खनिज अयस्क निम्न हैं–

1.	प्राकृत ताम्बा (native copper) Cu	100% Cu
2.	केल्कोसाइट (chalcocite) Cu_2S	79.8% Cu
3.	केवेलाइट (covellite) CuS	64.4% Cu
4.	बोर्नाइट (bornite) Cu_5FeS_4	63.6% Cu
5.	टेनेनटाइट (tennanite) $(CuFe)_{12}As_4S_{13}$	66.4% Cu
6.	टेट्राहेड्राइट (tetrahedrite) $(CuFe)_{12}Sb_4S_{13}$	57% Cu
7.	एनार्जाइट (anargite) Cu_3AsS_4	48.3% Cu
8.	केल्कोपाईराइट (chalcopyrite) $CuFeS_2$	34.5% Cu
9.	मैलेकाइट (malachite) $CuCO_3\,Cu(OH)_2$	57.3% Cu
10.	क्यूप्राइट (cuprite) Cu_2O	88.8% Cu
11.	एजूराइट (azurite) $2\,CuCO_3\,Cu\,(OH)_2$	55.1% Cu

ताम्र अयस्कों के साथ कई गैंग खनिज जैसे – क्वार्ट्ज, डोलोमाइट, कैल्साइट, सिडेराइट, सिलेकेंट खनिज व अन्य धातुओं के खनिज अयस्क मिलते हैं।

वितरण

देश में ताम्र अयस्क प्रमुखतः बिहार के सिंहभूमि – मौसाबानी, राजस्थान में खेतड़ी–सिगाना, मध्यप्रदेश में मलाजखण्ड क्षेत्रों में फैले हैं। इन राज्यों के अतिरिक्त आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात राज्यों में भी इस धातु के निक्षेप हैं।

राजस्थान में ताम्र अयस्क प्रमुखतः देहली महासंघ में पाये जाते हैं जो सिरोही से झुंझुनू तक फैले हुए हैं जिसमें खेतड़ी सिगाना पट्टी, झुंझुनू, चांग–चितार कालाघाट, पाली व अजारी बसन्तगढ़–पिपेला पट्टी, सिरोही प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त इन्हीं युग की चट्टानों में सीकर व अलवर जिलों में भी ताम्र अयस्क मिलते हैं।

सीसा–जस्ता खनिज (Lead-Zinc Minerals)

रासायनिक व भौतिक गुणों में अत्यधिक अन्तर होने के बावजूद सीसा–जस्ता प्रकृति में सल्फाइड के रूप में मिलते हैं। प्राकृतिक सहचर्य के कारण इन अयस्कों का वर्णन एक साथ ही किया गया है।

सीसे का उपयोग मिश्र धातु बनाने, रासायनिक विद्युत कार्यों, मशीनरी व युद्ध संबंधी सामग्री बनाने में किया जाता है। जस्ते का उपयोग लोहे के चादरों पर जस्ता चढ़ाने, पीतल के बर्तन बनाने, हस्तशिल्प की वस्तुएं व मिश्रधातु बनाने में किया जाता है।

खनिज अयस्क

सीसे जस्ते के महत्त्वपूर्ण अयस्क निम्न हैं–

1.	गैलेना (galena) PbS	86.6%Pb
2.	सिरूसाइट (cerussite) $PbCO_3$	75.5%Pb
3.	ऐंगलीसाइट (anglesite) $PbSO_4$	68.3%Pb

जस्ते के अयस्क

1.	जिंक ब्लेण्ड–स्फैलेराइट (sphalerite) ZnS	67%Zn
2.	स्मिथसोनाइट (smithsonite) $ZnCO_3$	52%Zn
3.	विलेमाइट (willemite) Zn_2SiO_4	58.3%Zn
4.	जिन्काइट (zincite) ZnO	80.3%Zn
5.	हैमीमार्फाइट (hemimorphite) $Zn_4Si_2O_7[OH]_2H_2O$	86.6%Pb

भारत में सीसे जस्ते के निक्षेप देश की मांग के मुकाबले बहुत ही कम हैं। जो महत्त्वपूर्ण निक्षेप उपलब्ध हैं वे भी राजस्थान में ही हैं। यह गौरव राजस्थान को प्राप्त है। राजस्थान के अतिरिक्त आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, बिहार, उड़ीसा आदि राज्यों में अल्प मात्रा में इन खनिजों के निक्षेप हैं।

ऐल्युमिनियम (Aluminium)

इस धातु का प्रयोग दैनिक जीवन में बढ़ता जा रहा है। सफेद रंग की यह धातु ताप व विद्युत की सुचालक होती है। वजन में हल्की, लचीली व मुलायम होने से इस धातु से मिश्र धातु बना प्रक्षेपास्त्रों, राकेटों, वायुयानों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त कई उद्योगों के यंत्र निर्माण व बर्तन भी इसी धातु से बनाये जाते हैं।

इस धातु का प्रमुख खनिज अयस्क बॉक्साइट (Bauxite) $(Al_2O_3H_2O)$ है।

उत्पत्ति

बॉक्साइट व लेटेराइट का निर्माण उष्ण व उपोष्ण (tropical and sub tropical) क्षेत्रों में ऐल्युमिनियम सिलिकेट वाली चट्टानों के अपक्षय से होता है जो प्रमुखतः आवरण निक्षेप (blanket deposits), अन्तस्तरित (intercalate deposits) निक्षेप के रूप में मिलते हैं।

वितरण

भारत में बॉक्साइट के प्रमुख निक्षेप मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र व बिहार में पाये जाते हैं। राजस्थान में कहीं पर भी व्यावसायिक खनन योग्य बॉक्साइट निक्षेप नहीं है, किन्तु कोटा व चित्तौड़गढ़ जिलों में लौहमय व ऐल्युमिनियम लेटेराइट के आवरण मिलते हैं।

रेडियोधर्मी / विद्युतनाभिक खनिज

परमाणु ऊर्जा से सम्पन्न धातुओं को रेडियोधर्मी खनिज या रेडियोएक्टिव धातुओं के नाम से जाना जाता है। इन धातुओं में

छुपी अपार ऊर्जा के रहस्य को जानना और उसका उपयोग करना एक महान उपलब्धि है। शांतिकाल में यह मान जाति के लिए 'परमाणु ऊर्जा' के रूप में वरदान है तो युद्ध काल में 'परमाणु बम' के रूप में अभिशाप है। परमाणु ऊर्जा से हो रहे विद्युत उत्पादन से औद्योगिक विकास तेजी से रहा है। वहीं हिरोशिमा व नागासाकी (जापान) परमाणु बम से हुए विनाश के प्रत्यक्ष उदाहरण है। रेडियोधर्मी खनिजों की खोज का कार्य देश में भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग (ए.एम.डी.) द्वारा किया जाता है।

खनिज अयस्क

रेडियोधर्मी धातुओं में यूरेनियम व थोरियम सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यूरेनियम के प्रमुख अयस्क यूरेनिनाइट (uraninite) व पिचब्लैण्ड (pitchblende) हैं। जिनमें यूरेनियम ऑक्साइड (UO_2) व थोरियम की मात्रा 50 से 58% तक पायी जाती है।

उत्पत्ति

यूरेनियम के निक्षेप उष्ण जलीय प्रक्रम द्वारा शिराओं के रूप में शैल व फॉस्फेट निक्षेपों के साथ व प्लेसर के रूप में मिलते हैं।

वितरण

भारत में यूरेनियम के निक्षेप बिहार राज्य के जादुगुड़ा क्षेत्र में मिलते हैं जहां इनका खनन होता है। इनके अतिरिक्त राजस्थान व आन्ध्रप्रदेश में भी यह खनिज मिलता है। थोरियम के निक्षेप केरल राज्य के दक्षिणी पश्चिमी समुद्री किनारे पर क्विलान के पास फैले रेत के साथ मोनेजाइट के रूप में मिलते हैं। इस रेत में औसत 4 से 5% की मोनेजाइट की मात्रा है। यहां पर 14 लाख टन संभावित मोनेजाइट के निक्षेप हैं। संसार में यह सबसे अच्छे मोनोजाइट के निक्षेप हैं। केरल के अतिरिक्त आन्ध्रप्रदेश के वाल्टेयर व पट्नम् में भी मोनोजाइट के निक्षेप रेत के साथ मिलते है। राजस्थान में यूरेनियम के अयस्क होने के संकेत उदयपुर, भीलवाड़ा व सीकर जिलों में मिलते हैं, किन्तु कहीं पर भी व्यावसायिक निक्षेप नहीं मिलते हैं।

अधात्विक खनिज (Non-Metallic Minerals)

अधात्विक खनिज सामान्यतः उसी रूप में प्रयुक्त होते हैं जिस रूप में इनका खनन किया जाता है। खनिज के उपयोग प्राप्त होने के तरीकों एवं रासायनिक संरचना के आधार पर इन्हें निम्न वर्गों में विभक्त किया गया है:–

(अ) औद्योगिक खनिज (Industrial Minerals)

(ब) रत्न खनिज (Gem Minerals)

(स) इमारती सजावटी एवं अन्य शैल समूह (Dimensional, Decorative and Shale Rocks)

(द) ईंधनोपयोगी खनिज (Fuel Minerals)

औद्योगिक खनिज (Industrial Minerals)

अधात्विक खनिजों का महत्त्व उनके रासायनिक घटकों और भौतिक गुणों से होता है। एक ही खनिज कई उद्योगों में प्रयुक्त होता है और रासायनिक घटकों में परिवर्तन होने पर यह एक उद्योग के बजाय कई दूसरे उद्योगों के लिये उपयुक्त होता है। खनिजों के उपयोग के आधार पर इन्हें निम्न वर्गों में विभक्त किया गया है:–

1. उच्चतापसह एवं ताप प्रतिरोधी खनिज – उदाहरण ग्रेफाइट, डोलामाइट, फायर क्ले, बॉक्साइट आदि।
2. कांच एववं सिरेमिक उद्योग के खनिज
3. उर्वरक एवं रासायनिक खनिज
4. फिलर, अपघर्णी एवं अन्य उपयोगी खनिज।

ग्रेफाइट

प्रकृति में ग्रेफाइट दो रूपों में मिलता है। एक क्रिस्टलीय एवं दूसरा अक्रिस्टलीय। क्रिस्टलीय ग्रेफाइट पत्रकों (Flakes) में पाया जाता है। ग्रेफाइट अपने विशिष्ट गुणों, उच्चताप सह गुणधर्म, ताप एवं विद्युत की सुचालकता तथा नरम एवं कम कठोर होने के कारण विभिन्न उद्योगों में उपयोग में लिया जाता है। यह अम्लों एवं अन्य अभिकर्मकों के साथ कोई क्रिया नहीं करता है और इसका गलनांक 3000 डिग्री सेण्टीग्रेड है इस कारण से इसका उपयोग उच्चतापसह पदार्थों, ढलाई के कार्यों (Foundry works), क्रुसिबल (Crucible), पेण्ट, स्नेहक (Lubricant), परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों, डायनमों के बुश, पेन्सिल, बैटरी आदि बनाने में किया जाता है।

फायर क्ले (Fire Clay)

यह क्ले हाइड्रस ऐल्यूमिनियम सिलिकेट है जिसमें प्लास्टीसिटी का गुण होता है। क्ले कई प्रकार की होती है जिनमें से मुख्य है – चाइना क्ले, बाल क्ले, फायर क्ले। क्ले के उपयोग उनके भौतिक गुणों जैसे प्लास्टीसिटी, सिकुड़न के गुण, ताप सहन करन की शक्ति, गर्म करने के बाद रंग, सान्द्रता, पानी सोखने की मात्रा आदि पर निर्भर करती है।

अन्य तापप्रतिरोधी खनिज–ऐस्बेस्टॉस एवं अभ्रक

ऐस्बेस्टॉस (Asbestos)

सर्पेन्टीन एवं ऐम्फिबोल के कुछ खनिजों के ऐस्बेस्टॉस का नाम दिया गया है। यह प्राकृतिक रूप से उपलब्ध रेशे वाला खनिज है जिस पर ताप एवं अम्लों का प्रभाव नहीं पड़ता है और जो 2650 डिग्री सेण्टीग्रेड तक ताप सहन कर सकने का गुण रखता

है। इसके रेशे कोमल, नाजुक एवं लचीले होते हैं। इसके रेशे से कपड़े बुने जा सकते हैं। यह खनिज ताप, उष्मा, विद्युत व ध्वनि का कुचालक होता है जिसके कारण इस खनिज का महत्त्व अत्यधिक है।

ऐस्बेस्टॉस उत्पत्ति के अनुसार ही व्यावसायिक नामों से जाना जाता है।

1. ऐम्फिबोल ऐस्बेस्टॉस
2. सर्पेन्टीन ऐस्बेस्टॉस

ऐम्फिबोल ऐस्बेस्टॉस के प्रमुख खनिज हैं – क्रोसिडोलाइट (Crocidolite), ऐन्थोफिलाइट (Anthophyllite) एवं एमोसाइट (Amosite)। सबसे अच्छे श्रेणी के ऐस्बेस्टॉस के रूप में क्रिसोटाइल (Crysotile) को ही जाना जाता है जिसके रेशे लम्बे, कोमल, नाजुक किन्तु मजबूत होते हैं। यह सर्पेन्टीन में मिलता है।

अभ्रक (Mica)

अभ्रक के ताप एवं विद्युत के कुचालक व वजन में हल्का होने के कारण इसके कई औद्योगिक उपयोग हैं। इसके आधार विदलन (Basal cleavages) होते हैं जिसके कारण यह पतली–पतली शीट के रूप में अलग–अलग की जा सकती है एवं पतली–पतली परतें होने के बावजूद इसकी मजबूती एवं नम्यता (Flexibility) बनी रहती है।

उपयोग

अभ्रक का महत्वपूर्ण उपयोग विद्युत उपकरणों में कुचालक के रूप में होता है।

कांच एवं सिरेमिक उद्योगों के खनिज

इस वर्ग में मुख्य रूप से क्वार्ट्ज, फैल्सपार, वोलैस्टोनाइट एवं क्ले खनिजों को सम्मिलित किया गया है जिनका अधिकतर उपयोग कांच व सिरेमिक उद्योग में किया जाता है। कुछ अन्य खनिज जैसे फ्लूओराइट, बैराइट डोलोमाइट, लीथियम खनिज, सिलीमैनाइट, मैग्नेसाइट, सोडा एश, टैल्क, पायरोफाइलाइट आदि खनिजों का भी इन उद्योगों में उपयोग होता है, किन्तु इन खनिजों की बहुत कम मात्रा की आवश्यकता होती है।

फैल्सपार

फैल्सपार रासायनिक दृष्टि से सोडियम, पोटेशियम एवं कैल्सियम के सिलिकेट हैं। भू–पर्पटी में यह सर्वाधिक पाया जाने वाला खनिज है और आग्नेय शैलों में प्रमुखता से मिलता है। फैल्सपार में सोडियम एवं पोटेशियम की मात्रा आर्थिक दृष्टि से उपयोगी होती है। फैल्सपार के साथ अल्प मात्रा में भी यदि लोहा, मैगनीज, सेरिसाइट, कैल्सियम की मात्रा हो तो वह औद्योगिक दृष्टि से अनुपयुक्त होता है।

उत्पत्ति

व्यावसायिक महत्त्व का फैल्सपार मुख्य रूप से जोन पेग्माटाइट शैल में मिलता है। आग्नेय एवं कायान्तरित चट्टानों में पेग्माटाइट भित्ति (Pegmatite Daykes) अथवा लेंस (Lenses) की आकृति में पाई जाती है। क्वार्ट्ज एवं फैल्सपार का उत्पादन प्रायः साथ–साथ होता है और यह उत्पादन मुख्य रूप से जोन पेग्माटाइट भित्तियों से ही होता है।

फैल्सपार का प्रमुख उपयोग सिरेमिक उद्योग में है। एलबाइट (फैल्सपार की किस्म) का उपयोग कृत्रिम दांत बनाने में किया जाता है।

उर्वरक एवं रासायनिक खनिज

उर्वरक खनिज

उर्वरक बनाने में काम आने वाले खनिजों को इस वर्ग में सम्मिलित किया गया है। जिनमें मुख्य है – रॉक फॉस्फेट शैल, जिप्सम, पाइराइट आदि। राजस्थान में ये सभी खनिज प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। इस वर्ग में रॉक फॉस्फेट एवं पाइराइट खनिजों का विवेचन किया गया है। रासायनिक खनिजों में बैराइट एवं फ्लूओराइट को इस वर्ग में परिभाषित किया गया है।

रॉक फॉस्फेट

रॉक फॉस्फेट, फॉस्फेट या फॉस्फोराइट एक या एक से अधिक फॉस्फेट खनिजों का समूह है जो कैल्सियम फॉस्फेट $\{Ca(PO_4)\}$ है। जिसमें P_2O_5 की मात्रा 30 प्रतिशत या इससे अधिक होने पर यह सीधे ही उर्वरक बनाने के लिये उपयुक्त होता है। कम मात्रा होने पर इसे परिष्कृत कर उपयोगी बनाया जा सकता है।

रॉक फॉस्फेट मुख्य रूप से सिंगल सुपर फॉस्फेट, ट्रिपल सुपर फॉस्फेट आदि उर्वरक बनाने के लिये प्रमुख कच्चा माल है। इसके अतिरिक्त यह कई रासायनिक उद्योगों में भी उपयोगी है।

जिप्सम

जिप्सम हाइड्रस कैल्सियम सल्फेट है जिसमें 20 प्रतिशत पानी होता है। इसका रासायनिक सूत्र $CaSO_4.4H_2O$ है। यह खनिज साधारणतः सफेद धूसर, हल्के पीले रंग का होता है।

उपयोग

वर्तमान में इसका उपयोग प्रमुखतः सीमेन्ट जमाव के समय को नियंत्रित करने हेतु, उर्वरक (अमोनियम सल्फेट) एवं प्लास्टर ऑफ पेरिस बनाने में किया जाता है। इसके अन्य उपयोग कीटणुनाशक दवाइयों, कागज, पेन्ट उद्योगों में है। जिप्सम को 100°-125° सेण्टीग्रेड तक गर्म करने से प्लास्टर ऑफ पेरिस

निर्मित होता है जो चिकित्सालयों, कारखानों, सांचे बनाने, ध्वनि प्रतिरोधक, अग्निसह पदार्थों के निर्माण में काम में लिया जाता है।

सेलिनाइट का उपयोग सफेद सीमेन्ट बनाने एवं सूक्ष्मदर्शी यंत्र में होता है। निम्न कोटि का जिप्सम क्षारीय भूमि को सुधार कर भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने के काम में लिया जाता है।

फिलर, अपघर्षी एवं अन्य उपयोगी खनिज

इस वर्ग में फिलर, अपघर्षण (एमरी स्टोन) एवं अन्य उपयोग में आने वाले खनिजों को सम्मिलित किया गया है। फिलर के रूप में काम में लिये जाने वाले खनिजों में (टैल्क) सोपस्टोन, बेण्टोनाइट, फुलर्स अर्थ, सिलिसियस अर्थ, पायरो फाइलाइट एवं कैल्साइट प्रमुख हैं। अपघर्षण के लिये प्रयुक्त खनिजों में कोरण्डम, गारनेट, ऐगेट प्रमुख हैं। अन्य उपयोगी खनिजों में लाइमस्टोन, वर्मीक्युलाइट, ऐस्बेस्टॉस, आंकर खनिजों को सम्मिलित किया गया है।

ईंधनोपयोगी खनिज (Fuel Minerals)

खनिज ईंधन के रूप में कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस को सम्मिलित रूप से जाना है। प्राकृतिक ईंधन का उपयोग एवं महत्त्व कई अन्य ऊर्जा के स्त्रोत जैसे विद्युत ऊर्जा (जल, तापीय एवं परमाणु ऊर्जा), अक्षय ऊर्जा, गैर परम्परागत, सूर्य ऊर्जा आदि के ज्ञात होने के उपरान्त भी कम नहीं हुआ है और ऊर्जा के नये स्त्रोत अभी भी खनिज ऊर्जा प्राकृतिक ईंधन का स्थान नहीं ले पाये हैं। खनिज ईंधनों को प्रमुखतः ऊर्जा के उत्पादन के लिये या कार्बनिक यौगिकों के निर्माण के लिये उपयोग में लाया जाता है।

खनिज ईंधनों का उपयोग ओटोमोबाइल उद्योग, आवागमन के साधनों में, चिकनाईयुक्त पदार्थ के रूप में, खाना पकाने, प्रकाश करने के लिए, कल–कारखानों को चलाने आदि में होता है। प्राकृतिक खनिज ईंधनों की प्रमुखतः निम्न दो श्रेणियां हैं–

(अ) कोयला व लिग्नाइट खनिज

(ब) पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस (हाइड्रोकार्बन)

प्राकृतिक तेल एवं गैस (Petrolium and Natural Gas)

काले सोने के नाम से जाना जाने वाला यह खनिज राष्ट्रों की आर्थिक स्थिति को सर्वाधिक प्रभावित करता है और यंत्रीकरण के इस युग में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ग्रीस निवासी पेट्रोलियम के स्त्रोतों से ईसा से 450 वर्ष पूर्व परिचित थे। चीन में ईसा के 221 वर्ष पूर्व इसका उपयोग प्रारम्भ हो गया था। पिछले कई वर्षों से इसे प्रकाश हेतु उपयोग में लिया जाता रहा है। पेट्रोलियम भू–तल से कई सौ मीटर नीचे पाया जाता है जिसे तेल के कुओं द्वारा प्राप्त किया जाता है और उनके परिशोधन से कई उत्पाद प्राप्त किये जाते हैं।

रासायनिक संघटन

पेट्रोलियम कई हाइड्रोकार्बन यौगिकों का मिश्रण है जिनके साथ ऑक्सीजन, नाइट्रोजन एवं गंधक भी अल्प मात्रा में होते हैं। पेट्रोलियम में पेराफीन वर्ग में कई सदस्य सामान्य ताप, दाब पर ठोस, द्रव एवं गैस के रूप में पाये जाते हैं। पेट्रोलियम में निम्न कार्बनिक पदार्थ अलग–अलग मात्रा में पाये जाते हैं–

1. पेराफिन वर्ग (C_nH_{2n+2}) के सदस्य
2. असंतृप्त हाइड्रोकार्बन
3. बेन्जीन (C_nH_n)
4. पॉरफिरिन्स (Porphyrins)
5. नैफ्थीन श्रृंखला (Nephthene series)
6. एसिटिलीन एवं उच्चतर सदस्य (Acetylene and Higher member)

किन्हीं दो स्थानों पर पाये जाने वाले पेट्रोलियम का रासायनिक संघटन एक–सा नहीं होता है। पेट्रोलियम का रंग गहरा पीला, गहरा भूरा एवं हल्के रंग का होता है। इसका आपेक्षिक घनत्व 0.8 से 0.98 होता है।

पेट्रोलियम की उत्पत्ति

पेट्रोलियम के निक्षेप कैम्ब्रियन कल्प से प्लायोसीन काल (तृतीय कल्प) की अवसादी शैलों के साथ मिलते हैं। कायान्तरित एवं आग्नेय शैलों के साथ इसकी उत्पत्ति साधारणतः नहीं पायी जाती है। पेट्रोलियम समुद्र में जैव पदार्थों (Organic matter) के दब जाने से एवं उसके बाद ऑक्सीजन रहित अपघटन के कारण हाइड्रोकार्बन का निर्माण होता है। जैव पदार्थों के दो वर्गों को पेट्रोलियम निर्माण के लिये उत्तरदायी माना जाता है। ये जैव पदार्थ निम्नलिखित हो सकते हैं:–

1. पादपों (पौधों) के अवशेष (Remains of Plants)
2. अधोप्लवक प्राणियों के अवशेष (Remains of Lower Plantonic animals) जैसे – डायटम एवं शैवाल (Diatom and Algae)।

तेल व गैस के निचय वितरण

भारत में पेट्रोलियम के निचय तृतीय कल्प की अवसादी शैलों में मिलते हैं। आसाम के डिगबोई, मोरेन, नहरकटिया क्षेत्रों में, गुजरात के खंभात बेसिन में अंकलेश्वर, कलोल नवगांव क्षेत्रों में महाराष्ट्र के बोम्बे हाई, क्षेत्रों में पेट्रोलियम के निचय मिलते हैं और

उनका वहाँ से दोहन किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त गोदावरी बेसिन, ब्रह्मपुत्र बेसिन एवं नर्मदा, बेसिन में भी पेट्रोलियम के निचय मिलने की संभावनाओं का पता चला है।

खनिजों के दोहन/खनन का पर्यावरण पर प्रभाव

विश्व में बढ़ते औद्योगिकीकरण के कारण सभी प्रकार के खनिजों का दोहन दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है जिसके दुष्प्रभाव प्रकृति में स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे हैं। खनन से प्रकृति का रूप ही विकृत होता नजर आता है। खनन के दुष्प्रभावों का संक्षिप्त अध्ययन निम्न बिन्दुओं/शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है:–

(1) खनन व वनों का ह्रास

(2) खनन व कृषि भूमि में कमी

(3) खनन व अपशिष्ट निस्तारण

(4) खनन व वायु प्रदूषण

(5) खनन व जल प्रदूषण

(6) खनन व ध्वनि प्रदूषण

(7) खनन व जल स्तर

1. खनन व वनों का ह्रास : विश्व में खनिज अयस्कों के निक्षेप प्रायः वनों में पाये जाते हैं और जब खनिज उत्पादन हेतु प्रक्रिया प्रारम्भ करते हैं तो खनन व खनिज उत्पादों को परिवहन द्वारा अन्य स्थानों पर ले जाने के लिए वनों को काट दिया जाता है। पूरी अरावली पर्वत श्रृंखला में दिन प्रतिदिन बढ़ते खनन के कारण जंगल लगातार कटते जा रहे हैं और उनमें निरन्तर ह्रास से इस क्षेत्र का पर्यावरण सन्तुलन बिगड़ना प्रारम्भ हो गया है। इसी का परिणाम है कि इस क्षेत्र में लगातार तापक्रम बढ़ रहा है और वार्षिक वर्षा कम होती जा रही है। गहराता जल संकट इसी का एक परिणाम है। इसके साथ ही वृक्षों के कटने से मृदा का क्षरण भी बढ़ता जा रहा है तथा तेज वर्षा के समय बाढ़ आना भी इसी का परोक्ष परिणाम है। वनों के कटते जाने से वहां के निवासियों के लिए आज भोजन प्रबन्ध कठिन हो रहा है तथा लोग अपने निवास को छोड़कर शहरों की ओर मजदूरी के लिए पलायन कर रहे हैं। इसलिए शहरी आबाद निरन्तर बढ़ती जा रही है।

2. खनन व कृषि भूमि में कमी : जब खनिजों के निक्षेप समतल भूमि पर मिलते हैं तो खनन कार्य से कृषि भूमि में कमी आ जाती है। तत्पश्चात् वहां के निवासियों के लिए पलायन ही एक मात्र विकल्प बचता है।

3. खनन व अपशिष्ट निस्तारण : विभिन्न प्रकार के खनिज अयस्कों के शोधन की प्रक्रिया के कारण अनुपयोगी पदार्थ भी उत्पन्न होते हैं जिनकी मात्रा धात्विक, अधात्विक व ईंधन के रूप में उपयोगी खनिजों से बहुत अधिक होती है। इसलिए इन अपशिष्टों को सही स्थान पर निस्तारण खनिज उद्योगों की सबसे बड़ी विकट समस्या है। उदाहरण के लिए मार्बल खनन व प्रक्रिया से जो स्लरी बनती है, उसकी मात्रा दिनों दिन बढ़ती जा रही है, स्लरी को यहां–वहां बेतरतीब डाल दिया जाता है जिससे कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती हैं। मार्बल स्लरी धीरे–धीरे वायु प्रदूषण का एक बहुत बड़ा कारण बनती जा रही है। खनिजों के शोधन प्रक्रिया से उत्पन्न कई गौण उत्पाद आने वाले समय में कई भयंकर प्रदूषक का रूप लेंगे और मानव सभ्यता के लिए सबसे बड़ा खतरा साबित होंगे। इनमें परमाणु अस्त्र भी एक है।

4. खनन व वायु प्रदूषण : खनिज के समय विस्फोटों (Blasting) से उत्पन्न धुआं कई प्रकार के वायु प्रदूषक उत्पन्न करता है। इस पर कोई प्रभावी नियंत्रण नहीं होने से भविष्य में मनुष्य को श्वसन संबंधी कई रोगों का सामना करना पड़ेगा।

5. खनन व जल प्रदूषण : खनिज उत्पादों की प्रक्रिया में हमेशा जल की आवश्यकता रहती है और प्रयुक्त जल में गौण उत्पाद सम्मिलित हो जाते हैं जिससे जल प्रदूषित होता है। खनन के कारण निकला अपशिष्ट जब वर्षा जल के साथ बहकर पानी में मिल जाता है तो नदियों, नालों व झीलों में प्रदूषण फैलता है। इसी प्रदूषण से कई प्रकार के जलीय पौधे व जीवों की मृत्यु हो जाती है।

6. खनन व ध्वनि प्रदूषण : खनन में प्रयुक्त मशीनों से तेज ध्वनि निकलती है जिससे वहां काम करने वाले लोगों में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं।

7. खनन व जलस्तर : खनन से बनी गहरी खदानों से पानी का स्तर धीरे–धीरे गहरा होता जा रहा जिससे जल स्तर गिरता जा रहा है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि खनिजों के बढ़ते उत्पादन से मनुष्य को कई प्रकार के खतरे हैं जिनसे उसे सावधान रहना चाहिये। समय रहते अगर इस समस्या के समाधान की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो यह मानव सभ्यता की समाप्ति का कारण बनेगा।

खनिजों के सांस्कृतिक प्रभाव

1. खनिज क्षेत्रों और खानों तक सड़कें, रेलमार्ग, मोटर मार्ग आदि बनाने आवश्यक होते हैं। खानों के समीप बड़े नगर बस जाते हैं। ऐण्डीज पर्वत पर, तांबे, टिन आदि के खनिजों

को प्राप्त करने के लिए मशीनरी तथा आवश्यक सामग्री वायुयानों द्वारा पहुंचाई गई थी। उसके लिये पर्वत पर भी वायुयानों के हवाई अड्डे बनाने पड़े थे।

2. खनिज सम्पत्ति के समाप्त हो जाने पर खानों को छोड़ दिया जाता है। वहां पर बसी हुई मानव–बस्ती को जीविका निर्वाह का कोई अन्य साधन अपनाना पड़ता है, वरना उस बस्ती को छोड़ना होता है। इस प्रकार खनन व्यवसाय एक प्रकार की चलवासिता (Nomadism) है। कृषि, उद्योग और व्यापार पर आधारित नगरों की अपेक्षा खनिज कस्बे अस्थाई होते हैं। खनिज समाप्ति पर वे प्रायः उजाड़ 'भुतहा नगर' (Ghost towns) बन जाते हैं। लोग वहां से स्थानान्तरण करके जीविका–निर्वाह हेतु दूसरे क्षेत्रों को चले जाते हैं।

3. खनिजों के खनन और उपयोग संबंधी आविष्कारों और खोजों से विभिन्न देशों में ज्ञान वृद्धि होती रहती है। एक देश में हुई वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजिकल उन्नति से दूसरे देश भी लाभ उठाते हैं। इससे पारस्परिक सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ते हैं।

खनिजों के राजनीतिक प्रभाव

1. खनिज संसाधनों का वितरण इतना विषम है कि कोई भी राष्ट्र यह नहीं कह सकता है कि उसके पास सभी खनिज आवश्यक मात्रा में मौजूद है। इसलिए राष्ट्रों में परस्पर व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय निर्भरता रहती है।

2. कोयला, पेट्रोलियम, लोहा तथा अन्य युद्धनीतिक महत्त्व के खनिजों के स्वामी राष्ट्र बलवान होते हैं। कोई भी राष्ट्र तब तक सबल नहीं हो सकता है, जब तक कि उसके भारी उद्योगों (लोहा–इस्पात और रसायनों) का विकास नहीं हुआ हो।

3. कुछ देश ऐसे होते हैं कि उनमें खनिज सम्पत्ति तो प्रचुर मात्रा में होती है, परन्तु आवश्यक पूंजी, वैज्ञानिक दक्षता और प्रबन्धक क्षमता नहीं होती है। दक्षिण अफ्रीका में रोडेशिया तथा दक्षिण अफ्रीका संघ में प्रचुर सोना, कोयला, प्लेटिनम, हीरा आदि सम्पत्ति थी, परन्तु विज्ञान और पूंजी की कमी थी। इस प्रकार के देशों में विदेशी आक्रान्ताओं, उपनिवेशकों या व्यापारियों के द्वारा खनिजों को मानव उपयोग में लाया जाता है।

खनिज संसाधन तथा युद्ध

1. प्रत्येक राष्ट्र की औद्योगिक, सैनिक तथा सामरिक शक्ति खनिज संसाधनों पर निर्भर करती है। यदि कोई राष्ट्र अपने लोहे–इस्पात के आधार पर भारी संख्या में युद्ध के टैंक, तोपें, कवच–गाड़ियां, ट्रक, मोटर गाड़ियां आदि बना लेता है, ऐल्युमिनियम से वायुयान बना लेता है, परन्तु यदि उस राष्ट्र के पास पेट्रोलियम नहीं है, तो चालक शक्ति के अभाव में टैंक और वायुयान बेकार पड़े रहेंगे। उसकी सैनिक शक्ति निर्बल रहेगी।

2. द्वितीय महायुद्ध वायुयानों द्वारा लड़ा गया था। इस महायुद्ध में नाजी जर्मनी की हार का सबसे बड़ा कारण पेट्रोलियम की कमी थी, क्योंकि उसके वायुयानों तथा भूमि पर लड़ने वाली सेनाओं के लिये प्रत्येक डिवीजन को प्रतिदिन 15,300 गैलन पेट्रोलियम की आवश्यकता होती थी।

3. संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन संसार के अधिकांश तेल क्षेत्रों पर अधिकार के लिये लगातार प्रयत्न करते रहे हैं। उन्होंने अरब, कुवैत, इराक, ईरान, वेनेजुएला आदि के तेल क्षेत्रों के ठेके लिये हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ के अधिकार में भी पेट्रोलियम के विशाल भण्डार हैं, फिर भी वह अपने पड़ौसी राज्यों (पोलैण्ड, रोमानिया, हंगरी, अल्बानिया और ईरान) के तेल क्षेत्रों में भी अपनी रुचि रखता है। इन तथ्यों से प्रकट होता है कि पेट्रोलियम के स्वामित्व से आत्म–रक्षा और औद्योगिक सुरक्षा बनी रहती है।

4. कभी–कभी खनिजों की प्राप्ति के लिये युद्ध हो जाते हैं। जर्मनी के पास कोयले का भण्डार है, परन्तु लोहे की कमी है। जर्मनी ने पड़ौसी देश लक्जमबर्ग के लोहे का अपने आधिपत्य में कर लिया था।

ऊर्जा संसाधन (Energy Resources)

पृथ्वी पर उपस्थित प्रत्येक जीव को अपनी जैविक क्रियाएं के संचालन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। मनुष्य पृथ्वी पर सबसे बुद्धिमान प्राणी होने के कारण ऊर्जा का उपयोग अपने जैविक क्रियाओं के अतिरिक्त अपने जीवन स्तर को बढ़ाने एवं आराम प्राप्ति हेतु भी करता है।

कार्य करने की क्षमता ऊर्जा कहलाती है।

ऊर्जा नियंत्रण के नियम (Laws of Energy Control)

ऊर्जा नियंत्रण उष्मागतिकी के नियमों पर आधारित है। उष्मागतिकी का प्रथम नियम ऊर्जा संरक्षण के बारे में बताता है। इसके अनुसार ऊर्जा का न तो निर्माण किया जा सकता है ना ही उसको नष्ट किया जा सकता है। इसे केवल एक रूप से दूसरे रूप में बदला जा सकता है। उदाहरणार्थ हरित पादप सौर ऊर्जा को अवशोषित कर इसे रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर जैवभार के रूप में संचित कर लेते हैं।

उष्मागतिकी की द्वितीय नियम के अनुसार ऊर्जा रूपांतरण में कुछ ऊर्जा का क्षय उष्मा के रूप में होता है। यह उष्मा वातावरण में चली जाती है। ऊर्जा को कैलोरी में मापा जाता है। एक ग्राम

कैलोरी ताप का वह परिमाण है जो एक ग्राम पानी के तापमान को एक डिग्री सेन्टीग्रेड बढ़ाने के लिए आवश्यक होती है। इस मात्रक का प्रयोग खाद्य पदार्थों एवं अन्य जैविक पदार्थों का ऊर्जा का मान प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है। यद्यपि अब इसका स्थान जूल ने ले लिया है।

जूल कार्य का व्यावहारिक मात्रक है। यह ऊर्जा की व्युत्पन्न SI इकाई है जिसका अर्थ है वह कार्य जो एक न्यूटन के बराबर बल किसी बिन्दु को एक मीटर तक विस्थापित करने के लिए किया जाता है।

ऊर्जा के स्त्रोत (Sources of Energy)

ऊर्जा के स्त्रोतों को दो रूपों में बांटा जा सकता है–

I. नवीकरणीय ऊर्जा II. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत

I. नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत (Renewable Energy Resources)

ऐसे ऊर्जा संसाधन जिनकी आपूर्ति कमी खत्म नहीं होती है तथा इन्हें बार–बार उत्पन्न किया जा सकता है। इनका प्रयोग अगर विवेकपूर्ण तरीके से किया जाए तो वे अपने आप को यथावत बनाये रखते हैं, नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन कहलाते हैं। ये निम्न प्रकार के होते हैं–

(1) सौर ऊर्जा

(2) पवन ऊर्जा

(3) समुद्री ऊर्जा

(4) भूतापीय ऊर्जा

(5) जैवभार आधारित ऊर्जा

1. सौर ऊर्जा (Solar energy) – सूर्य ऊर्जा का सबसे बड़ा स्त्रोत है। सम्पूर्ण ऊर्जा का 99.98% भाग सौर ऊर्जा से प्राप्त होता है लेकिन इसका बहुत सूक्ष्म अंश ही मानवोपयोगी ऊर्जा के रूप में प्रयोग हो पाता है। यह प्रदूषण रहित ऊर्जा का एक असीमित स्त्रोत है। सौर ऊर्जा सभी ऊर्जा का प्राथमिक स्त्रोत है इसे यांत्रिक, विद्युत या रासायनिक ऊर्जा में बदल दिया जाता है। इसके निम्न उपयोग है–

(i) पानी गर्म करना

(ii) भोजन पकाने में

(iii) सौर भट्टी के रूप में

(iv) इमारतों को गर्म करने में

(v) ग्रीन हाउस में

(vi) बीज उपचार में

(vii) ताप विद्युत ऊर्जा

(viii) जल पम्प

(ix) सोलर आसवन में।

सोलर कुकर से जिसमें एक वर्ग मीटर एकत्रण क्षेत्र में 17.3 प्रतिशत की दक्षता से सौर ऊर्जा एकत्रित हो रही है, 663 किग्रा ईंधन लकड़ी की बचत की जा सकती है।

प्रकाशवोल्टिक सेल द्वारा सौर ऊर्जा को सीधे ही विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं। जिसका उपयोग सामुदायिक प्रकाश, रेडियो, टी.वी., घरेलू प्रकाश हेतु किया जाता है।

नेशनल सोलर फोटोवॉल्टिक एनर्जी डिमोनस्ट्रेशन प्रोग्राम के तहत गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत विभाग द्वारा 1980 के पश्चात् अनेक ऐसे संयंत्रों की स्थापना की गई जिसका उपयोग जल पम्प, टी.वी. एवं ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु किया जाता है। हरियाणा में प्रथम सौर हीटर 1982 में हरियाणा ब्रीवरीज लिमिटेड, मुरथाल में लगाया गया जिसके द्वारा प्रतिदिन 15000 लीटर पानी को 65 डिग्री सेन्टीग्रेड पर गर्म किया जा सकता है। हरियाणा सौर ऊर्जा संयंत्रों में देश में अग्रणी है।

2. पवन ऊर्जा (Wind energy) – पवन ऊर्जा एक नवीनकरणीय ऊर्जा स्त्रोत है जो पृथ्वी की सतह के प्रतिदिन ठण्डे व गर्म होने की प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न होती है। गतिशील वायु को हवा या पवन (Wind) कहते हैं। हवा की इसी ऊर्जा को मानव उपयोग में लिया जाता है। वायु में ऊर्जा निम्न कारणों से होती है–

(i) वायु की गति (Velocity of air)

(ii) वायु का घनत्व (Density of air)

(iii) गतिशील वायु क्षेत्र (Area of moving air)

किसी स्थान विशेष पर गतिशील वायु की शक्ति निम्न प्रकार से प्रदर्शित करती है–

$$P = 0.5\ PAV^3$$

P = वायु का घनत्व, A = गतिशील वायु क्षेत्र, V = वायु की गति

भारत में गुजरात, पश्चिमी घाट, मध्य भारत एवं दक्षिणी भारत के कई हिस्सों में वर्ष के 5–7 माह वायु का औसत घनत्व 4 किलोवाट प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन से अधिक रहता है। शरद ऋतु में वायु घनत्व 10 किलोवाट प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन से भी अधिक रहता है। उच्च घनत्व की गतिशील वायु को यांत्रिक या विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है।

पवन ऊर्जा परिवर्तन तंत्र दो प्रकार के होते हैं–

(i) समानान्तर अक्ष मशीन (Horizontal axis machine) – इसमें घूर्णन अक्ष गतिशील वायु की दिशा के समानान्तर होता है। इसी कारण इस प्रकार के तंत्र मे वायु की दिशा में परिवर्तन के साथ–साथ पवन ऊर्जा परिवर्तन तंत्र की दिशा को भी परिवर्तित करना पड़ता है।

(ii) लम्बवत अक्ष मशीन (Vertical axis machine) – इसमें घूर्णन अक्ष भूतल एवं वायु की दिशा दोनों से समकोण (90°) पर होता है। इसलिए इस तंत्र में वायु की दिशा में परिवर्तन के साथ–साथ पवन ऊर्जा परिवर्तन तंत्र की दिशा को परिवर्तित करने की आवश्यकता नहीं रहती। यह मशीन जल पम्प चलाने व कम मात्रा में विद्युत उत्पादन में उपयुक्त होती है। इसकी दक्षता 10–15% तक होती है।

पवन ऊर्जा के उपयोग (Uses of Wind Energy)

पवन ऊर्जा का प्रयोग आदिकाल से होता रहा है। चीन में लगभग 3000 वर्ष पुराने पवन ऊर्जा आधारित मशीनों के प्रमाण मिले हैं। आधुनिक समय में पवन ऊर्जा का प्रयोग जल पम्प चलाने, विद्युत उत्पादन एवं अनाज चक्कियों में किया जाता है।

(i) विद्युत उत्पादन (Electricity production) – विश्व में लगभग 4500 मेगावाट विद्युत का उत्पादन पवन ऊर्जा द्वारा किया जाता है। भारत में लगभग 1000 मेगावाट क्षमता का वायु ऊर्जा विद्युत उत्पादन संयंत्र स्थापित किया जा चुका है। गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत विभाग के अनुसार 3.3 मेगावाट माण्डवी, 1.1 मेगावाट कच्छ में, 550 किलोवाट ओखा, टुटिकोरिन एवं पुरी में स्थापित किया जा चुका है। इन क्षेत्रों में जहाँ औसत वार्षिक वायु वेग कम से कम 18 किमी. प्रति घण्टा या 2000 किलोवाट घण्टा प्रति वर्ष हो ऐसे संयंत्र अधिक सफल होते हैं।

(ii) पवन ऊर्जा आधारित जल पम्प (Water pump based on wind energy) – इस प्रकार के जल पम्प का आकार 1–8 मीटर रोटर व्यास तक होता है। वायु की गतिशीलता के आधार पर इसमें 1 किलोवाट तक की ऊर्जा प्राप्त की जाती है। अधिक ऊर्जा हेतु पवन विद्युत पम्पिंग तंत्र का उपयोग किया जा सकता है। आज ऐसे पम्प उपलब्ध हैं जो 5–6 कि.मी. प्रति घण्टा या अधिक वायुवेग पर प्रयोग में लाये जा सकते हैं। वायु पम्प द्वारा प्रति घन मीटर पानी को पम्प करने में लगभग 20 रुपये का खर्च आता है।

(iii) बैटरी चार्जर (Battery charger) – यह एक पवन मशीन है जिसमें रोटर का व्यास 1–2.5 मीटर तक होता है। जिसके द्वारा 10 मीटर/सैकण्ड की वायु गति पर 50–500 वाट की शक्ति प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार चार्ज बैटरी का प्रयोग प्रकाश, रेडियो संचार, अस्पताल के उपकरण आदि चलाने में किया जाता है।

(iv) पवन जनरेटर (Wind generator) – इसमें एक स्टील का टावर लगा रहता है एवं पवन को पकड़ने के लिए प्रोपेलर ब्लेड होते हैं तथा एक जनरेटर होता है। अलग–अलग पवन जेनेरेटर खेतों व घरों के पास लगे रहते हैं। लेकिन ये समूह में या पवन फार्म के रूप में व्यवस्थित होते हैं। बहती हुई पवन टर्बाइन में लगे ब्लेडों को ठीक एक बड़े हवा खिलौनानुमा पिन व्हील (Toy pin wheel) की सतह घुमाती है। इस यंत्र को पवन टर्बाइन कहते हैं।

टर्बाइन के ब्लेड एक से जुड़े रहते हैं जो एक टर्निंग शाफ्ट के ऊपर टिका रहता है। यह शाफ्ट एक गीयर ट्रांसमिशन बॉक्स के भीतर जाता है जहाँ उसके घूमने की गति बढ़ जाती है। ट्रांसमिशन बॉक्स एक उच्च गति वाले शाफ्ट से जुड़ा रहता है जो एक जनरेटर को घुमाता है, उससे विद्युत उत्पन्न होती है। पवन टर्बाइन जैसे पवन चक्कियाँ एक टावर पर लगाई जाती है जिससे अधिक से अधिक ऊर्जा संचित की जा सके। 30 मीटर से अधिक ऊंचाई पर ये तेज या कम तूफानीय हवाओं का लाभ ले सकते हैं।

भूतापीय ऊर्जा (Geothermal Energy)

वह ऊर्जा जो भूमि के नीचे चट्टानों एवं तरल पदार्थों में छिपी होती है। पृथ्वी का आंतरिक ताप 1000–4000 डिग्री सेन्टीग्रेड तक होता है तथा दाब किसी–किसी स्थान पर 20000 पाउण्ड प्रति वर्ग इंच तक हो जाता है। भूतापीय ऊर्जा मुख्य रूप से पृथ्वी के अन्तर में उपस्थित रेडियोधर्मी थोरियम, पोटेशियम एवं यूरेनियम के विघटन का परिणाम है।

पृथ्वी के अन्दर छिद्रित स्थानों में भरे हुए अति गर्म जल, वाष्प या दोनों जलतापीय संसाधन कहलाते हैं। ये छिद्रित चट्टानें अपारगम्य चट्टानों की एक परत से घिरी होती है। जलतापीय संसाधनों का तापमान 100 से 240 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। मध्यम ताप ब्राइन्स जिसमें मिथेन घुली रहती है, भू दाब संसाधन कहलाते हैं। इनका दाब 1500–15000 मीटर गहराई पर 5000–2000 psi होता है तथा तापमान 90–200 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। गर्म शुष्क चट्टानों का ताप 90–950 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। लावे का ताप 700–1600 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है।

भूतापीय ऊर्जा का प्रयोग स्टीम टर्बाइन को शक्ति प्रदान करने व विद्युत उत्पादन करने के लिए होता है। इसका प्रयोग घरों व इमारतों को गर्म करने के लिए भी किया जाता है।

जैवभार आधारित ऊर्जा (Biomass Based Energy)

जैव ऊर्जा एक ऐसी ऊर्जा है जो जैविक पदार्थों जैसे वनस्पति, जन्तु अपशिष्ट, नगरीय कचरा, औद्योगिक कचरा,

प्राकृतिक वनस्पति, वन अवशेष आदि से प्राप्त होती है।

हरित पादप सूर्य के प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण द्वारा विकिरण ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं जो पौधों में संचित हो जाती है। जन्तु जब पेड़–पौधों को खाते हैं तो रासायनिक ऊर्जा उनके शरीर में एकत्र हो जाती है। इनमें से कुछ खाद एवं अन्य अवशिष्टों के रूप में रह जाती है। जैवभार ईंधन नवीनकरणीय होते हैं क्योंकि इसका कच्चा माल ज्यादा फसल उगाकर या ज्यादा जैविक कचरा एकत्र कर फिर से बनाया जा सकता है।

जैवभार वर्गीकरण (Classification of Biomass)

जैवभार का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

1. पेट्रो पादप (Petro plants) – आदिकाल से मानव भोजन व ईंधन के लिए पेड़–पौधों को काम में लेता रहा है। भोजन पकाने, घरों को गर्म करने, धातुओं को गर्म करने उससे हथियार या कृषि यंत्र का आकार देने आदि में इनका प्रयोग करता था। 1880 तक लकड़ियाँ प्राथमिक ऊर्जा का स्त्रोत थी इसके बाद कोयले ने इसका स्थान ले लिया जिसने औद्योगिक क्रान्ति ने जन्म लिया। अनेक वनस्पतियों से द्रव हाइड्रोकार्बन को पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन में परिवर्तित किया जा सकता है। जिन पौधों से यह द्रव हाइड्रोकार्बन प्राप्त किया जाता है उन्हें पेट्रो पादप कहते हैं। ये पौधे मुख्य रूप से यूफोर्बियेसी, एस्कलपियेडेसी, एपोसायनेसी, अर्टीकेसी, सेपोटेसी एवं कॉनवोलवुलेसी कुलों में मिलते हैं। इनकी 385 से अधिक प्रजातियाँ ज्ञात हैं।

2. ऊर्जा पौधारोपण (Energy plantations) – औद्योगीकरण व जनसंख्या वृद्धि के परिणामस्वरूप अनवीनीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों पर दबाव पड़ा जिससे मनुष्य को ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों के बारे में सोचने को मजबूर होना पड़ा। फलस्वरूप ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों का बढ़ावा दिया जाए जिन्हें पुनर्स्थापित किया जा सके। ऊर्जा पौधारोपण उन स्थानों पर किया जाता है जो कृषि अनउपयोगी होती है ऐसे क्षेत्र जहाँ औसत वार्षिक वर्षा 60 से.मी. से कम होती हो ऊर्जा पौधरोपण के लिए उपयुक्त होते हैं। इसके लिए निम्न प्रजातियाँ रोपित की जाती है–

(i) प्रोसोपिस जुलीफ्लोरा – अंग्रेजी बबूल

(ii) अकेशिया निलोटिका – देशी बबूल

(iii) अकेशिया ऑरिकुलीफोर्मिस – बंगाली बबूल

(iv) यूकेलिप्टस सिट्रीयोडोरा – सफेदा

(v) ल्युसीना ल्युकोसिफेला – सुबबूल

(vi) डलबर्जिया सिसू – सफेद शीशम

(vii) टेमेरिन्डस इन्डिका – इमली

(viii) एल्बिजिया लेबेक – सरेस

(ix) पिथेसेलोबियम डल्से – जंगल जलेबी

3. कार्बनिक अपशिष्ट (Organic wastes) – इसमें जन्तुओं, कृषि फसलों, वनों के अवशेष, नगरीय कचरा, प्लावित पौधे अवशेष एवं औद्योगिक अपशिष्ट आते हैं।

(i) जन्तु अपशिष्ट – गाय, बैल एवं भैंस आदि का गोबर इसका महत्वपूर्ण स्त्रोत है। जन्तु अपशिष्ट को निम्न दो प्रकार से ऊर्जा के रूप में प्रयोग में लिया जाता है–

(a) गोबर से जैव गैस बनाई जाती है। यह ज्वलनशील गैस होती है जिसका उपयोग प्रकाश, खाना पकाने आदि में किया जाता है।

(b) गोबर से बने कण्डे का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में खाना बनाने एवं मिट्टी के बर्तन पकाने में करते हैं।

तालिका – जन्तुओं से प्राप्त अपशिष्ट की औसत मात्रा

जन्तु	औसत अपशिष्ट (गोबर मात्रा किग्रा / प्रतिदिन)
भैंस	15.0
गाय	10.0
बैल	12.5
ऊंट	6.0
घोड़ा	10.0
भेड़	1.0
सुअर	2.25

(ii) कृषि वनस्पति अवशेष (Agricultural residue) – हमारे देश में 200 मिलियन टन कृषि फसलों के अवशेष जैसे गन्ने की पर्ण, चावल छिलका एवं कपास का तना आदि प्राप्त होता है। तालिका में इनका विवरण दिया गया है।

तालिका – महत्वपूर्ण कृषि अपशिष्ट की मात्रा

कृषि अवशेष	मात्रा (मिलियन टन / हैक्टेयर)
गेहूँ का भूसा	58.1 मिलियन टन
मक्का का भूसा (तना, भूसा, डुंडा)	29.6 मिलियन टन
कपास का तना	18.5 मिलियन टन
बरमुडा घास	15.0 टन
चावल छिलका	11.8 मिलियन टन
मूंगफली छिलका	8.6 मिलियन टन
गाजर घास	6.0 टन
गन्ने की पत्ती	5.0 टन

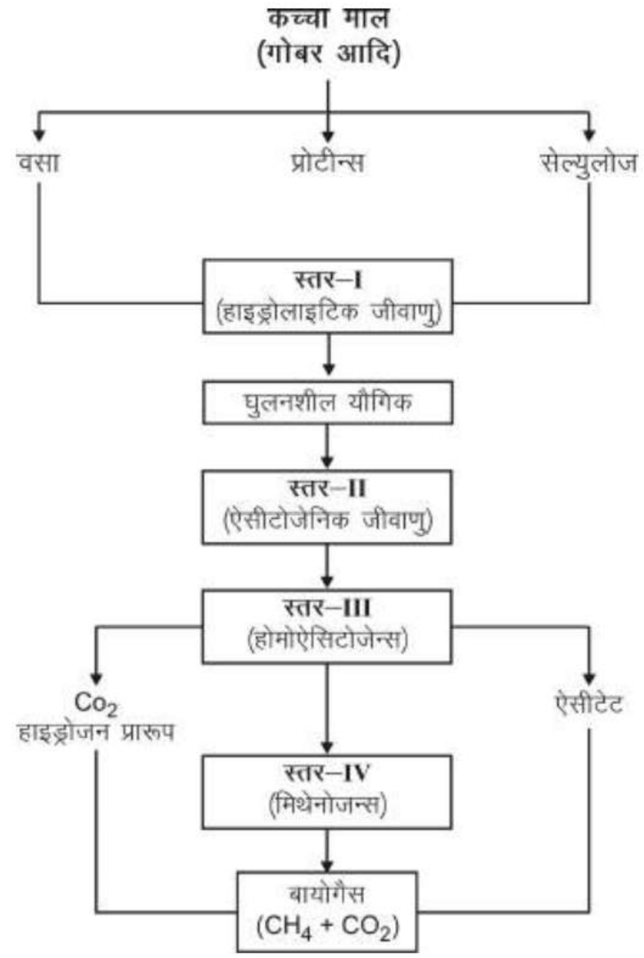

(iii) वन अवशेष (Forest residue) – वनों से प्राप्त होने वाली सूखी लकड़ियाँ, पत्तियाँ, बीमारी व कीड़े–मकोड़ों, वनों में आग एवं तूफान से प्राप्त मृत पौधें व लकड़ियाँ, सूखी घास व झाड़ियाँ, वृक्षों की सूखी छाल व आरा मशीन बुरादा आदि इसमें आते हैं जो ऊर्जा उपयोगी होते हैं।

(iv) नगरीय अपशिष्ट (Urban waste) – नगरों से निकलने वाला रसोई संबंधित कचरा, ज्वलनशील ठोस कचरा, व्यवसायिक कचरा, अनाज मण्डी एवं सब्जी मण्डी अपशिष्ट आदि से ऊर्जा प्राप्त होती है।

(v) प्लावित पौध अवशेष (Floating plants residues) – तालाबों, झीलों आदि में जलकुंभी, सिंघाड़ा व कमल जैसे पौधे वृहत मात्रा में जल सतह पर उग आते हैं। सुपोषणीय झीलों में इनका उत्पादन 25 टन प्रति एकड़ शुष्क भार तक होता है जिसका उपयोग मीथेन गैस के उत्पादन में ईंधन के रूप में होता है।

(vi) औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial wastes) – उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्टों को भी भाप बनाने, गर्म करने आदि के साथ–साथ विद्युत उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है।

बायोगैस (Biogas)

यह कई गैसों का मिश्रण है जिसमें लगभग 57–70 प्रतिशत मीथेन, 30–45 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड एवं सूक्ष्म मात्रा में अमोनिया, हाइड्रोजन सल्फाइड एवं ऑक्सीजन होती है। बायोगैस ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में गोबर आदि पर जीवाणुओं की क्रिया से बनाई जाती है। बायोगैस के निम्नलिखित फायदे हैं–

(i) सस्ती एवं प्रदूषण रहित तकनीक।

(ii) कच्चे माल की पर्याप्त उपलब्धता।

(iii) ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्त्रोत।

(iv) गाय का गोबर के अलावा अन्य कार्बनिक अपशिष्ट जैसे मुर्गी, भेड़, ऊंट, घोड़े व मानव मल तथा कृषि एवं औद्योगिक अपशिष्टों के प्रबंधन हेतु एक सुलभ तकनीक।

(v) पोषक तत्वों से समृद्ध प्रचुर मात्रा में उर्वरक की प्राप्ति।

बायोगैस उत्पादन में जीवाणु के तीन समूह भाग लेते हैं– (i) हाइड्रोलाइटिक एवं एसिडोजेनिक समूह (ii) एसिटोजेनिक जीवाणु (iii) मिथेनोजेनिक जीवाणु। इस गैस के उत्पादन में मुख्य रूप से गाय, भैंस आदि का गोबर कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होता है इसलिए इसे गोबर गैस भी कहते हैं। उत्पादन की प्रक्रिया को संक्षेप में चित्र में प्रदर्शित किया गया है।

बायोगैस संयंत्र में मिश्रण इकाई, प्रीडाइजेस्टर, डाइजेस्टर एवं गैस एकत्रण टैंक एवं ड्राइंग बेड्स मुख्य भाग है। इस गैस के लिए प्रयुक्त कच्चे माल (गोबर) आदि में 80% जल होता है तथा सूक्ष्म जैविक प्रक्रिया में 90% जल की आवश्यकता होती है। इसलिए बायोगैस उत्पादन हेतु अतिरिक्त जल की आवश्यकता होती है। इन्हें बड़े टैंकों में एकत्रित किया जाता है।

भारत सरकार के गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत विभाग ने बायोगैस तकनीक का वृहद् स्तर पर क्रियान्वित करके के लिए राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना शुरु की। इस परियोजना के तहत राष्ट्रीय स्तर पर लगभग 5 लाख से अधिक बायोगैस संयंत्र लगाये जा चुके हैं। एक अनुमान के अनुसार 150,000 बायोगैस संयंत्र से ईंधन के रूप में प्रयुक्त होने वाली 600,000 टन लकड़ी की बचत की जा सकती है। इन संयंत्रों से प्राप्त 206 मिलियन टन कार्बनिक खाद से 1.4 मिलियन टन नत्रजन, 1.3 मिलियन टन फॉस्फोरस तथा 0.9 मिलियन टन पोटाश की बचत की जा सकती है।

जल विद्युत ऊर्जा (Hydroelectric Energy)

जल से प्राप्त जल ऊर्जा भी नवीनकरणीय ऊर्जा का एक स्त्रोत है। बहते हुए जल को जमा करके इसे विद्युत में परिवर्तित

किया जा सकता है। इसे पन बिजली विद्युत या जल विद्युत कहा जाता है।

पन बिजली ऊर्जा वह ऊर्जा है जो गिरते हुए पानी द्वारा पन पक्की, प्रोपेलर या टरबाइन्स को चलाने के द्वारा उत्पन्न होती है। इस हेतु नदी पर बांध का निर्माण किया जाता है जिसमें जल को बड़े कुण्ड में जमा किया जाता है। जब यह पानी टरबाइन से होकर गुजरता है तो वह घूमती है, जो इसके साथ जुड़े जनरेटर को भी घुमाती है, जिससे विद्युत उत्पन्न होती है।

इस प्रकार उत्पन्न विद्युत को घरों, खेतों एवं छोटे गांवों में उपयोग लिया जा रहा है।

समुद्री ऊर्जा (Oceanic Energy)

समुद्र ऊर्जा का असीमित भण्डार है। जल तरंग, ज्वार, जल ताप एवं घनत्व में अन्तर आदि समुद्री ऊर्जा के मुख्य आधार है। इसे निम्न प्रकारों में पढ़ा जा सकता है–

(i) समुद्र तापीय ऊर्जा परिवर्तन (Ocean thermal energy conversion) – सूर्य की किरणों के अवशोषण के फलस्वरूप समुद्र तल का तापमान बढ़ जाता है। इस तापीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया को समुद्र तापीय ऊर्जा परिवर्तन (OTEC) कहते हैं।

यह संयंत्र एक ताप गतिकी चक्र पर कार्य करता है जिसमें गर्म सतही जल व ठण्डे गहरे जल के तापान्तर का उपयोग विद्युत उत्पादन हेतु किया जाता है। इन संयंत्रों के संचालन के फलस्वरूप स्वच्छ, ठण्डा एवं पोषण पदार्थों युक्त जल प्राप्त होता है।

(ii) लवणता के अन्तर से प्राप्त ऊर्जा (Energy from difference in salinity) – जल की लवणता में अन्तर से भी ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। समुद्री जल की लवणता में अन्तर से परासरणीय दाब में अन्तर आ जाता है जो ऊर्जा का मुख्य स्त्रोत है। लेकिन परासरणीय ऊर्जा को प्राप्त करने की तकनीक अभी उपलब्ध नहीं है।

(iii) तरंग ऊर्जा (Wave energy) – हवा के कारण समुद्र के जल में उत्पन्न गति तरंग कहलाती है। तरंगें अगर नियमित व शक्तिशाली है तो ऊर्जा का अहम् स्त्रोत बन सकती है। तरंग ऊर्जा की क्षमता अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग होती है। भारत के समुद्री तटों पर वार्षिक तरंग ऊर्जा क्षमता लगभग 5–15 किलोवाट प्रति मीटर के मध्य है। इसे पहले यांत्रिक व बाद में विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है।

(iv) ज्वार ऊर्जा (Tidal energy) – ज्वारभाटा के चढ़ाव व उतार से प्राप्त ऊर्जा ज्वार ऊर्जा कहलाती है। ज्वारभाटा पृथ्वी के घूर्णन एवं चन्द्रमा व सूर्य के गुरुत्वाकर्षण के कारण समुद्र में उत्पन्न होता है। उच्च व निम्न ज्वार के मध्य 5 से 5.5 मीटर का अन्तर होने पर इसे विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है।

ज्वारीय ऊर्जा संयंत्र एकल या बहु बेसिन होते हैं जिसमें एक बांध, जनरेटिंग इकाई तथा टाइडल बेसिन और समुद्र को अलग करती हुई एक संरचना होती है। उच्च ज्वार के समय बेसिन में जल इकट्ठा हो जाता है तथा निम्न ज्वार के समय जब बाहरी जल का स्तर नीचे गिर जाता है तो जल टरबाइन्स से होकर बहने लगता है तथा विद्युत उत्पन्न होती है।

भारत में ज्वारीय ऊर्जा विकास परियोजना के लिए उपयुक्त स्थान कच्छ व केम्बे की खाड़ी है जहाँ पर अधिकतम ज्वारीय अन्तर क्रमशः 8 एवं 11 मीटर है। सुन्दरबन का गंगा डेल्टा जहाँ अधिकतम ज्वारीय अन्तर 5 मीटर है, भी ऐसी परियोजनाओं हेतु प्रयोग में लिया जा सकता है। हमारे देश की अनुमानित ज्वारीय ऊर्जा क्षमता लगभग 8000–9000 मेगावाट है।

महासागर के अन्दर बड़ी नदियों के समान बहता एवं घूमता हुआ जलधारा कहलाता है। इन नियमित व तीव्र धाराओं को भी ऊर्जा उत्पादन हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है।

II. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत
(Non Renewable Energy Resources)

वे ऊर्जा संसाधन जिनकी पुनर्स्थापना या पुनर्निर्माण संभव नहीं है, अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत कहलाते हैं।

अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों का भण्डार सीमित मात्रा में उपलब्ध है तथा इसके पुनरुत्पादन की दर खपत के अनुपात में नगण्य है। अतः ऊर्जा के इन स्त्रोतों का भविष्य खतरे में है। प्रमुख अनवीकरणीय स्त्रोत निम्न प्रकार है–

1. कोयला 2. खनिज तेल 3. प्राकृतिक गैस 4. नाभिकीय ऊर्जा

1. कोयला (Coal) – कोयला, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस की उत्पत्ति जैविक होती है और इन्हें जीवाश्म ईंधन भी कहते हैं। कोयला घरों व उद्योगों में ऊर्जा के प्रथम स्त्रोत के रूप में काम आने वाला ठोस ईंधन है। हमारे देश में कोयले के प्रचुर मात्रा में भण्डार है। पृथ्वी के अन्दर लगभग 6000 बिलियन टन कोयला है। जिसमें से लगभग 2000 बिलियन टन कोयले का उपयोग किया जा चुका है। भारत में बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल, आन्ध्र प्रदेश व मध्य प्रदेश कोयला उत्पादक राज्य है।

कोयले में राख की मात्रा 30 प्रतिशत तक हो सकती है। कोयले में जितना कार्बन अधिक होता है, उसकी गुणवत्ता उतनी ही

अधिक होती है लेकिन सल्फर की मात्रा लगभग 1 प्रतिशत से कम होती है जबकि अन्य कोयले में सल्फर 3–4 प्रतिशत होता है। कोयले का निर्माण वनस्पतियों से होता है। कई लाखों वर्ष पूर्व अधिकतर पेड़ जो निचले दलदल में पैदा हुए थे। नष्ट होते गये तथा दलदल में नीचे की ओर धंसते गये। दलदल में ये पूरी तरह सड़ नहीं पाये क्योंकि वहाँ पर हवा का अभाव था। कुछ पेड़–पौधों के हिस्से से जो आंशिक रूप से कीचड़ में ही सड़ गये थे, उन्हें पीट कहा गया जिसमें उष्मा की कम मात्रा होती है। ये पीट पानी में दबने के बाद रेत व गीली मिट्टी में परिवर्तित हो जाते हैं। इन पर कई वर्षों तक और पदार्थ जमा होते रहे हैं और यह पेड़ों का हिस्सा दबाव एवं ताप के प्रभाव से कोयले में परिवर्तित हो जाता है। यह सबसे अधिक मात्रा में उपलब्ध ईंधन है लेकिन सबसे बड़ा प्रदूषण का स्त्रोत है।

2. खनिज तेल (Mineral oil) – यह एक तरल जीवाश्म ईंधन है जो पृथ्वी के नीचे और समुद्र की सतह के नीचे से मिलता है। ऐसा माना जाता है कि 10–20 करोड़ वर्ष पूर्व अतिसूक्ष्म जीवों जो पादप प्लवकों (Phytoplanktons) के जटिल विघटनकारी प्रक्रिया के फलस्वरूप तेल व प्राकृतिक गैस का निर्माण हुआ। ये पादप प्लवक संसार के महासागरों में वर्षों पहले तैरते आ रहे हैं। सौर ऊर्जा को प्रयोग में लेकर प्रकाशसंश्लेषण प्रक्रिया द्वारा भोजन संचित किया। जब ये पादप समूह मर जाते हैं। समुद्री सतह के नीचे डूब जाते हैं तथा धीरे–धीरे दबे रहकर ठोस चट्टानों में बदल जाते हैं। पृथ्वी के भीतर का ताप एवं चट्टानों के भार के फलस्वरूप इन प्लवकों में उपस्थित ऊर्जा अंश धीरे–धीरे हाइड्रोकार्बन व गैस में बदल जाते हैं।

भारत में गंगा, ब्रह्मपुत्र घाटी का उत्तरी मैदान, बाम्बे हाई, थार रेगिस्तान, गुजरात के मैदान, अण्डमान निकोबार के आस–पास के क्षेत्रों में खनिज तेल के अपार भण्डार है। पेट्रोलियम एक महत्वपूर्ण संसाधन है। विश्व में प्रयुक्त होने वाली कुल ऊर्जा का 40 प्रतिशत भाग पेट्रोलियम प्रदान करता है। इसका प्रयोग कारों, हवाई जहाजों, टैक्ट्ररों, पानी के जहाजों, विद्युत खाना बनाने, उद्योगों, कृषि क्षेत्रों आदि में किया जाता है। जीवाश्म ईंधन के निर्माण में लाखों वर्ष लग जाते हैं। इसे नवीनीकृत नहीं किया जा सकता है, ना ही इसे फिर से बनाया जा सकता है। हम केवल इस पेट्रोलियम ईंधन को संरक्षण कर बचा सकते हैं। वायु एवं सौर ऊर्जा प्राप्ति के नये स्त्रोत प्राप्त कर इसकी खपत कम कर सकते हैं।

3. प्राकृतिक गैस (Natural gas) – यह भी एक जीवाश्म ईंधन है। पृथ्वी के नीचे पाई जाने वाली गैसों का मिश्रण है। खनिज तेल के साथ–साथ प्राकृतिक गैस का भण्डार भी मिलता है। प्राकृतिक गैस का उपयोग भी ऊर्जा स्त्रोत के रूप में किया जाता है। इसे घरेलू भट्टियों, रसोईघरों में, खाने पकाने में, पेट्रो केमिकल उद्योगों में इसका उपयोग किया जाता है। आजकल इसका प्रयोग बसों व कारों में भी किया जा रहा है। उर्वरक संयंत्रों में भी इसे काम लिया जाता है।

भारत में त्रिपुरा, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उड़ीसा व आन्ध्र प्रदेश में इसके भण्डार मिले है।

4. नाभिकीय ऊर्जा (Nuclear energy) – नाभिकीय संलयन एवं विखण्डन की प्रक्रिया में बड़ी मात्रा में ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। रेडियोएक्टिव पदार्थों के क्षय से भी ऊर्जा निकलती है।

परमाणु ऊर्जा प्राप्त करने के लिए नाभिकीय रिएक्टर का उपयोग किया जाता है जिसमें यूरेनियम एवं प्लूटोनियम के समस्थानिक परमाणु संलयन की प्रक्रिया से गुजरते हैं। इसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाली उष्मा (भाप) द्वारा टरबाइन को घुमाकर विद्युत उत्पन्न की जाती है। परमाणु रिएक्टर तीन प्रकार के होते हैं–

(i) लाइट वाटर रिएक्टर – इसमें ठण्डा करने हेतु सामान्य जल प्रयोग में लाया जाता है।

(ii) हेवी वाटर रिएक्टर – इसमें ठण्डा करने के लिए भारी जल का प्रयोग किया जाता है। केनाडियन डयुटेरियम रिएक्टर (CANDU) इसका सबसे अच्छा उदाहरण है।

(iii) लिक्विड मेटल फास्ट ब्रीडर रिएक्टर – इस रिएक्टर में ठण्डा करने हेतु द्रव सोडियम का प्रयोग किया जाता है।

सम्पूर्ण विश्व में 300 से अधिक परमाणु ऊर्जा संयंत्र कार्यरत हैं। भारत परमाणु खनिजों से समृद्ध देश है तथा बिहार में यूरेनियम, केरल में थोरियम की खानें उपस्थित हैं। हमारे देश में छः नाभिकीय संयंत्र महाराष्ट्र (तारापुर), राजस्थान (कोटा), तमिलनाडु (कलपक्कम) आदि में कार्यरत है।

नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों के अनेक लाभ हैं जैसे अधिक मात्रा में ईंधन की आपूर्ति, कम मात्रा में CO_2 उत्सर्जन, कम मात्रा में मध्यवर्ती पर्यावरणीय प्रभाव मजबूत सुरक्षा तंत्र के मद्देनजर दुर्घटना की कम सम्भावना आदि। लेकिन परमाणु अपशिष्टों के निपटान, परमाणु हथियार निर्माण में तकनीक का दुरुपयोग, आतंकी हमले के लिए अतिसंवेदनशीलता इसके उपयोग को मुश्किल विकल्प के रूप में में पेश करता है। एक परमाणु रिएक्टर का जीवन काल 40–60 वर्ष होता है तत्पश्चात इसे बन्द न कर ठण्डे ज्वलनशील संयंत्र के रूप में छोड़ देते हैं। क्योंकि इसमें उपस्थित अनेक रेडियोधर्मी पदार्थों को हजारों वर्षों तक पर्यावरण से दूर रखना होता है। इस प्रकार अनेक सुरक्षा उपायों के मद्देनजर परमाणु संयंत्र का निर्माण एवं रख–रखाव अत्यन्त महंगा होता है।

ऊर्जा आवश्यकता (Growing Energy Need)

आदि मानव ऊर्जा की पूर्ति के लिए पूर्णतया जीवों पर निर्भर था। ईंधन की आवश्यकता के लिए जैवभार आधारित स्त्रोतों एवं खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जानवरों का प्रयोग करता था। जनसंख्या वृद्धि, मानव के बौद्धिक विकास, औद्योगीकरण एवं मानव सभ्यता में परिवर्तन के साथ–साथ उसकी ऊर्जा की मांग में वृद्धि होती गई। परिणामस्वरूप वन आधारित (लकड़ी आदि) ऊर्जा स्त्रोतों पर अत्यधिक दबाव बढ़ता गया। गाय, बैल, भैंस आदि पशुओं का गोबर भी ऊर्जा स्त्रोत के रूप में प्रयोग होने लगा। 1830 में उत्तरी अमेरिका एवं यूरोपीय देशों में कोयले के भण्डारों का पता चला। वर्ष 1880 में प्राथमिक ऊर्जा स्त्रोत के रूप में लकड़ी का स्थान कोयले ने ले लिया। ऊर्जा संसाधनों की आवश्यकता के आधार पर अब तक की स्थिति को निम्न पांच कालों में बांटा जा सकता है–

1. असीमित भण्डार काल (1850–1925) – इस काल में यह अवधारणा प्रबल थी कि ऊर्जा संसाधनों का भण्डार असीमित हैं तथा इसके परिणामस्वरूप उनका अंधाधुंध दोहन होने लगा तथा इसके संरक्षण पर ध्यान नहीं दिया गया।

2. आत्मनिर्भरता काल (1925–1950) – इस काल में युद्ध के समय, युद्ध बाद पुनर्वास, जीवन स्तर में वृद्धि, राजनैतिक अस्थिरता, जनसंख्या में वृद्धि आदि के कारण ऊर्जा संसाधनों की मांग में तेजी से वृद्धि हुई। आपूर्ति के संबंध में आत्मनिर्भरता पर बल दिया गया।

3. पर्यावरण क्षति काल (1950–1960) – इस अवधि में तीव्र शहरीकरण एवं औद्योगिक वृद्धि के कारण पर्यावरणीय प्रदूषण में वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण की अपार क्षति हुई।

4. जन चेतना काल (1960 के बाद) – इस काल में जनता को प्राकृतिक संसाधनों के अति दोहन से पारिस्थितिकी असन्तुलन की चिंता होने लगी। फलस्वरूप पर्यावरण संरक्षण हेतु नीतियों का निर्माण, गैर सरकारी प्रयास एवं जन चेतना आदि की ओर ध्यान आकर्षित हुआ।

5. वर्तमान काल – वर्तमान समय में ऊर्जा संसाधनों की अपर्याप्तता के बोध के कारण संरक्षण की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है।

आधुनिक विकास का आधार ऊर्जा है। विकसित देशों में ऊर्जा की खपत विकासशील देशों से अधिक होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में विश्व की 33 प्रतिशत ऊर्जा की खपत होती है जबकि भारत में मात्र 1.5 प्रतिशत ऊर्जा व्यय होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति व्यक्ति बिजली की खपत विकासशील देशों की तुलना में 25 गुना अधिक है। इन देशों में विद्युत ऊर्जा का उपयोग औद्योगिक क्षेत्रों में होता है। ऊर्जा की खपत का लगभग 90 प्रतिशत भाग खनिज तेल, कोयला एवं प्राकृतिक गैस से प्राप्त होता है।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोत (Alternate Source of Energy)

परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों के अंधाधुंध दोहन से आई तीव्र कमी ने सभी देशों को ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोतों के विकास के लिए प्रेरित किया। हमारे देश में परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत की प्राप्ति हेतु तकनीकी केन्द्रीय व राज्य विद्युत प्राधिकरण के तहत कार्य करती है। भारत सरकार का गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत विभाग वैकल्पिक ऊर्जा के स्त्रोतों के विकास के लिए सतत् प्रयत्नशील है। ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोत निम्नलिखित है–

(i) सौर ऊर्जा (Solar energy)

(ii) पवन ऊर्जा (Wind energy)

(iii) भूतापीय ऊर्जा (Geothermal energy)

(iv) जैवभार ऊर्जा (Biomass energy)

(v) ज्वारीय ऊर्जा (Tidal energy)

इन ऊर्जा स्त्रोतों का विस्तृत विवरण नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के अन्तर्गत किया गया है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. संसाधनः वे स्त्रोत जिन पर मानव समाज दीर्घ अवधि तक आश्रित रहता है।
2. प्राकृतिक संसाधनः वे संसाधन हैं जो प्रकृति द्वारा प्रदान किये जाते हैं और मनुष्य के लिए उपयोगी होते हैं।
3. प्रशासनिक आधार पर वनों को तीन प्रकारों में बांटा गया है – (i) संरक्षित वन (ii) रक्षित वन (iii) अवर्गीकृत वन।
4. जलवायवीय विषमता के आधार पर वन–सदाबहार, मानूसनी, शुष्क, पर्वतीय एवं डेल्टाई प्रकार के होते हैं।
5. निर्वनीकरणः वनों से निरन्तर वृक्षों की कटाई या विनाश निर्वनीकरण कहलाता है।
6. पृथ्वी पर जल के वितरण के अनुसार जल संसाधन दो प्रकार के होते हैं – (i) स्थलीय (ii) महासागरीय।
7. खाद्य संसाधनः प्राकृतिक या कृत्रिम रूप से उत्पादित जिन पदार्थों से मनुष्य अपना भोजन प्राप्त करता है। खाद्य

संसाधन कहलाता है।

8. नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनः वे ऊर्जा संसाधन जिनमें पुनः स्थापना की सहज क्षमता होती है और यदि उनका विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए तो वे अपने आप को यथावत बनाये रखते हैं।

9. सौर ऊर्जाः सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊर्जा सौर ऊर्जा कहलाती है। यह सभी ऊर्जा का प्राथमिक, प्रदूषण रहित, असीमित ऊर्जा स्त्रोत है।

10. गतिशील वायु को हवा या पवन कहते हैं।

11. वायु में ऊर्जा उसकी गति, घनत्व व गतिशील वायु क्षेत्र के कारण होती है।

12. पवन ऊर्जा की सहायता से जल पम्प चलाने, अनाज पीसने, विद्युत उत्पादन किया जाता है।

13. जल तरंग, ज्वार, जल ताप एवं घनत्व में अन्तर समुद्री ऊर्जा के प्रमुख आधार है।

14. ज्वारभाटे के चढ़ाव व उतार से प्राप्त ऊर्जा ज्वारीय ऊर्जा कहलाती है।

15. पृथ्वी के अन्दर प्राकृतिक तौर पर उत्पन्न होने वाली उष्मा भूतापीय ऊर्जा कहलाती है।

16. भूतापीय ऊर्जा की उत्पत्ति पृथ्वी के अन्तर में उपस्थित रेडियोधर्मी पदार्थ थोरियम, पोटेशियम व यूरेनियम के विघटन के फलस्वरूप होती है।

17. महासागर के अन्दर बड़ी नदियों के समान बहता एवं घूमता हुआ जल जलधारा कहलाता है।

18. ऐसे पौधे जो द्रव हाइड्रोकार्बन के स्त्रोत होते हैं, पेट्रो प्लान्ट्स कहलाते हैं। उदाहरण – सेपोटेसी, यूफोर्बियेसी, एस्कलपियेडेसी, एपोसायनेसी आदि कुलों के पौधे।

19. कृषि अयोग्य भूमि पर ऐसे पौधों का रोपण करना जिससे ऊर्जा प्राप्त होती है। ऊर्जा पौध रोपण कहलाती है। उदाहरण – एकेशिया निलोटिका, प्रोसोपिस चाइलेन्सिस, प्रो. सिनरेरिया, एल्बिजिया लेबेक आदि।

20. बायोगैस का उत्पादन O_2 की अनुपस्थिति में गोबर आदि से किया जाता है। यह मुख्य रूप से CO_2 एवं CH_4 गैसों का मिश्रण होती है।

21. बायोगैस के निर्माण में तीन समूह के जीवाणु– हाइड्रोलाइटिक, ऐसिटोजेनिक एवं मिथेनोजेनिक जीवाणु भाग लेते हैं।

22. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत वे ऊर्जा स्त्रोत है जिनकी पुनर्स्थापना या पुनर्निर्माण संभव नहीं है।

23. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत कोयला, प्राकृतिक गैस, खनिज तेल एवं नाभिकीय ऊर्जा है।

24. जीवाश्म ईंधन वे होते हैं जिनकी उत्पत्ति जैविक होती है। उदाहरण – कोयला, खनिज तेल, प्राकृतिक गैस आदि।

25. कोयले में राख की मात्रा 30 प्रतिशत तक हो सकती है। कोयले की गुणवत्ता उसमें कार्बन की अधिकता पर निर्भर करती है।

26. भारत में रानीगंज, झरिया, बोकारो, पन्चकानम, सिंगरौली, चन्दा वार्घा एवं गोदावरी वेली मुख्य कोल फिल्ड्स हैं।

27. भारत में बाम्बे हाई और आस–पास तटीय मैदान, गुजरात के मैदान, थार का रेगिस्तान एवं अण्डमान निकोबार के आस–पास के क्षेत्र खनिज तेल के भण्डार है।

28. प्राकृतिक गैस का प्रयोग रसोईघरों, कारों व बसों एवं पेट्रो केमिकल उद्योगों में किया जाता है।

29. नाभिकीय रिएक्टर में रेडियोधर्मी पदार्थों की छोटी सी मात्रा से विशाल मात्रा में ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। नाभिकीय ऊर्जा का समुद्री जहाज, स्पेस क्राफ्ट्स एवं विद्युत उत्पादन में प्रयोग किया जाता है।

30. भारत में छः नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र कार्यरत हैं जिसमें महाराष्ट्र में तारापुर, राजस्थान में कोटा एवं तमिलनाडु में कलपक्कम प्रमुख है।

31. भारत में परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत प्राप्ति की तकनीकी केन्द्रीय एवं राज्य विद्युत प्राधिकरण के अधीन होती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न (Multiple Choice Questions)

1. राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार देश के भौगोलिक क्षेत्र का कितना प्रतिशत भाग वनाच्छादित करना है–

(अ) 33 (ब) 50

(स) 63 (द) 23

2. सदाबहार वनों में वार्षिक औसत वर्षा कितनी होती है–

(अ) 50 से.मी. से कम (ब) 50–100 से.मी.

(स) 100–200 से.मी. (द) 200 से.मी. से अधिक

3. 2013 की वन रिपोर्ट के अनुसार देश के भौगोलिक क्षेत्रों का कितना प्रतिशत भाग वनाच्छादित है–

(अ) 19.27 (ब) 21.23

(स) 33.02 (द) 41.07

4. मरुस्थलीय व शुष्क वन कहाँ पाये जाते हैं–
(अ) तमिलनाडु (ब) आसाम
(स) राजस्थान (द) पश्चिमी बंगाल

5. अधिकांश अन्तर्राष्ट्रीय परिवहन किस मार्ग से होता है–
(अ) जल (ब) थल
(स) वायु (द) उपरोक्त सभी

6. प्राथमिक ऊर्जा स्त्रोत के रूप में लकड़ी का स्थान कोयले ने कब लिया–
(अ) 1830 (ब) 1850
(स) 1880 (द) 1910

7. समुद्री ऊर्जा का मुख्य आधार है–
(अ) जल तरंग (ब) जल ताप
(स) जल घनत्व (द) जल तरंग, ताप व घनत्व में अन्तर

8. पेट्रोलियम पादप किन कुलों के सदस्य हैं–
(अ) पोअेसी व लिलियेसी
(ब) एस्कलपिडियेसी व यूफोर्बियेसी
(स) क्रुसीफेरी व माल्वेसी
(द) सोलेनेसी एवं कम्पोजिटी

9. बायोगैस में कौनसी गैसों का मिश्रण होता है–
(अ) SO_2 एवं CO_2 (ब) SO_2 एवं CH_4
(स) CO एवं CO_2 (द) CO_2 एवं CH_4

10. बायोगैस उत्पादन हेतु कच्चे माल में कितना प्रतिशत जल की मात्रा होना आवश्यक है–
(अ) 50 (ब) 70
(स) 80 (द) 90

11. जीवाश्म ईंधन है–
(अ) खनिज तेल (ब) कोयला
(स) प्राकृतिक गैस (द) उपरोक्त सभी

12. ऊर्जा पौधारोपण के लिए उपयुक्त पादप प्रजाति है–
(अ) प्रोसोपिस सिनरेरिया (खेजड़ी)
(ब) प्रोसोपिस जुलीफ्लोरा (विलायती बबूल)
(स) डिलोनिक्स रिजीया (गुलमोहर)
(द) केसिया फिस्टुला (अमलतास)

13. राजस्थान में परमाणु ऊर्जा संयंत्र कहाँ है–
(अ) बांसवाड़ा (ब) चित्तौड़गढ़
(स) कोटा (द) उदयपुर

14. भारत में ज्वारीय ऊर्जा विकास परियोजना के लिए उपयुक्त स्थान है–
(अ) बंगाल की खाड़ी
(ब) खंभात की खाड़ी
(स) कच्छ व केम्बे की खाड़ी
(द) उपरोक्त सभी

15. बायोगैस का उत्पादन किससे किया जाता है–
(अ) गोबर (ब) कृषि अपशिष्ट
(स) औद्योगिक अपशिष्ट (द) उपरोक्त सभी

16. कोयले की गुणवत्ता किसकी मात्रा पर निर्भर करती है–
(अ) राख की मात्रा (ब) कार्बन की मात्रा
(स) सल्फर की मात्रा (द) इनमें से कोई नहीं

17. वनोन्मूलन के पर्यावरण पर पड़ने वाला प्रभाव है–
(अ) बाढ़ (ब) मृदा अपरदन
(स) आवासों का विनाश (द) उपरोक्त सभी

18. जीवाश्मीय ईंधन है–
(अ) पेट्रोलियम (ब) प्राकृतिक गैस
(स) कोयला (द) उपरोक्त सभी

19. अनवीनकरणीय ऊर्जा स्त्रोत है–
(अ) सौर ऊर्जा (ब) पवन ऊर्जा
(स) भूतापीय ऊर्जा (द) नाभिकीय ऊर्जा

20. वायु में ऊर्जा का कारण है–
(अ) वायु की गति (ब) वायु का घनत्व
(स) गतिशील वायु क्षेत्र (द) उपरोक्त सभी

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न
(Very Short Answered Questions)

1. प्राकृतिक संसाधन क्या है?
2. नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन क्या है?
3. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के दो उदाहरण दीजिए।
4. वर्ष 2013 की रिपोर्ट के अनुसार भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का कितना प्रतिशत भाग वनाच्छादित है?

5. मानसूनी वनों में कितनी वार्षिक वर्षा होती है?
6. वन महोत्सव आन्दोलन किस वर्ष में प्रारंभ हुआ?
7. पृथ्वी का अधिकांश जल कहाँ पाया जाता है?
8. विश्व की खाद्य समस्या के दो प्रमुख कारण बताइए?
9. अतिचारण के दो प्रमुख प्रभाव लिखिए?
10. मरुस्थलीकरण क्या है?
11. प्रकाश वॉल्टिक सेल का क्या उपयोग है?
12. पवन ऊर्जा का उपयोग किसमें किया जाता है?
13. ज्वारीय ऊर्जा क्या है?
14. भूतापीय ऊर्जा क्या होती है?
15. जैवभार के स्त्रोत क्या है?
16. बायोगैस में किन गैसों का मिश्रण होता है?
17. पेट्रो प्लान्ट्स किसे कहते हैं?
18. गोबर का क्या उपयोग है?
19. बायोगैस का क्या उपयोग है?
20. भारत में कोयला उत्पादक के तीन राज्यों के नाम बताइये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न (Short Answered Questions)

1. वनों से क्या लाभ हैं?
2. राष्ट्रीय वन नीति की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?
3. ऊर्जा संसाधन कितने प्रकार के होते हैं?
4. जीवाश्मीय ईंधन क्या है?इनके क्या उपयोग हैं।
5. खाद्य संसाधन क्या है?इसके प्रमुख स्त्रोत कौनसे हैं?
6. निर्वनीकरण किसे कहते हैं?इसके पर्यावरण पर क्या प्रभाव है?
7. वनों के विनाश के रोकने के क्या उपाय है?
8. स्थलीय जल संसाधनों का क्या महत्व है?
9. महासागरीय जल संसाधनों का मनुष्य के लिए क्या उपयोग है?
10. विश्व खाद्य समस्या के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिए।
11. आधुनिक कृषि के पर्यावरण पर क्या प्रभाव है?समझाइये।
12. नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
13. सौर ऊर्जा क्या है?इसके प्रमुख उपयोग क्या है।
14. समुद्री संसाधन क्या है?इससे ऊर्जा प्राप्त करने के स्त्रोत कौनसे हैं?
15. बायोगैस उत्पादन की विधि लिखिए।
16. अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों पर एक टिप्पणी लिखिए।
17. पवन ऊर्जा क्या है?इसके क्या उपयोग है?
18. नाभिकीय ऊर्जा क्या है?इसके उत्पादन के क्या लाभ एवं सीमाएं हैं?
19. निम्न पर टिप्पणी लिखिए–
    (i) खनिज तेल (ii) प्राकृतिक गैस
20. जैवभार के विभिन्न स्त्रोतों पर लेख लिखिए?

निबन्धात्मक प्रश्न (Long Answered Questions)

1. वन संसाधन क्या है?इस पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. ऊर्जा संसाधन क्या है?ये कितने प्रकार के होते हैं?विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. अतिचारण व आधुनिक कृषि के पर्यावरण पर प्रभावों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. जल संसाधनों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
5. बायोगैस क्या है?इसके उत्पादन की क्रिया विधि एवं उपयोग पर टिप्पणी लिखिए।
6. निम्न पर टिप्पणी लिखिए–
    (i) वन संसाधन
    (ii) खाद्य संसाधन
    (iii) जल संसाधन

उत्तरमाला: 1. (अ) 2. (द) 3. (ब) 4. (स) 5. (अ) 6. (स) 7. (द) 8. (ब) 9. (द) 10. (द) 11. (द) 12. (ब) 13. (स) 14. (स) 15. (द) 16. (ब) 17. (द) 18. (द) 19. (द) 20. (द